मार्च-२००० Rs. 10/-
चन्दामामा

THE LAST CENTURY'S HALL OF FAME
IS STUDDED WITH MANY A NAME
OF A GREAT ONE WHO DREAMED AND DID
AND WHO LIKE YOU WAS ONCE A KID...
MARTIN SHOWED MIGHT ISN'T RIGHT
THOMAS INVENTED THE ELECTRIC LIGHT
MOHANDAS SET HIS PEOPLE FREE
THE LUMIERE BOYS SHOT THE FIRST MOVIE
NELSON TOOK HIS NATION FAR
HENRY MADE A MOTOR CAR
CASSIUS PROVED HE WAS THE BEST
EDMUND CLIMBED MT. EVEREST
TERESA EASED THE SICK MAN'S WOES
BILL GAVE THE WORLD WINDOWS
I.T.Kids
GROWING UP WITH COMPUTERS

चन्दामामा

सम्पुट-१०२ फरवरी २००० सञ्चिका-२

अन्तरङ्गम्

कहानियाँ

ज्ञानप्रद धारावाहिक

पौराणिक धारावाहिक

ऐतिहासिक विभूतियाँ

विशेष

इस माह की विशेष

एक सींगवाले राक्षस की शादी
(वेताल कथा)

अच्छाई का फल

अरण्य का साथी

अभिव्यक्त करो!
पुरस्कार लो!

चन्दामामा

Printed and Published by B. Viswanatha Reddi at B.N.K Press Pvt. Ltd., Chennai-600 026 on behalf of Chandamama India Limited, Chandamama Buildings, Vadapalani, Chennai-600 026. Editor: Viswam

सबसे
उत्तम
उपहार
आप अपने
दूर रहनेवाले
करीबियों के लिए
सोच सकते हैं

चन्दामामा

उन्हें उनकी
पसंद की भाषा में एक
पत्रिका दें

असमिया, बंगला, अंग्रेजी, गुजराती, हिन्दी, कन्नड़,
मलयालम, मराठी, उड़िया, संस्कृत, तमिल व तेलुगु

और उन्हें घर से दूर घर के स्नेह को महसूस होने दें

शुल्क
सभी देशों में एयर मेल द्वारा
बारह अंक 900 रुपये
भारत में भूतल डाक द्वारा
बारह अंक १२० रुपये
अपनी रकम
डिमांड ड्राफ्ट या मनी आर्डर द्वारा
'चंदामामा इंडिया लिमिटेड' के नाम भेजें
सेवा में:

प्रकाशन विभाग
चन्दामामा इंडिया लिमिटेड
चंदामामा बिल्डिंग्स, वडपलनि, चेन्नै-600 026

संपादक
विश्वम
डिजाइनिंग व तकनीकी
सलाहकार
उत्तम

प्रधान कार्यालय
चंदामामा बिल्डिंग्स
वडपलनि, चेन्नै-600 026
फोन-481778

अन्य कार्यालय

दिल्ली
फ्लैट नं. 415, 4थी मंजिल
प्रताप भवन,
एस. बहादुरशाह जफर मार्ग
नई दिल्ली-110 002
फोन : 3353406/7

मुंबई
2/बी. नाज बिल्डिंग्स
लेमिंगटन रोड, मुंबई-400 004
फोन : 3889763-3886324-3877110
फाक्स : 3889670

अमेरिका के लिए
एक प्रति
२ यु.एस.डालर
वार्षिक चंदा
२० यु.एस.डालर

संस्थापक

चक्रपाणि, बी. नागि रेड्डी

योग्य व्यक्ति को अपना मत कैसे दें?

इस पत्रिका के छपते समय तक भारत के बहुत से राज्यों में विधान सभाओं के आम चुनावों के कारण वातावरण में उत्तेजना बनी हुई है।

लेकिन चुनाव उत्तेजना के लिए नहीं हैं। ये ठण्डे दिमाग से निर्णय लेने के कार्य हैं। मतमान की निम्नतम आयु को घटा कर 18 वर्ष कर दिये जाने के कारण हमारे बहुत-से पाठक मतदाता बन गये हैं। चतुर व्यक्तियों ने उन्हें जाति, धर्म और राजनीतिक गुटबन्दी से ऊपर उठ कर योग्य उम्मीदवारों को अपना मत देने की सलाह दी होगी। यह बहुत नेक सलाह है। किन्तु समस्या कहीं और है। अधिकांशत: अच्छे लोग चुनावों से दूर रहते हैं, क्योंकि वे ऐसे मौकों पर पैदा होनेवाले तनावों को झेल नहीं सकते।

जो सचमुच में योग्य व्यक्ति हैं, उन्हें चुनावों के मैदान में आने की प्रेरणा देने के लिए, हमें चुनावों को एक शांतिपूर्ण प्रकरण बनाना होगा। वास्तव में, हमें भविष्य में एक ऐसे समय के आने की अपेक्षा रखनी चाहिए जब उम्मीदवारों के मतदाताओं से भीख मांगने की बजाय, मतदाता स्वयं योग्य व्यक्तियों के पास जायें और उनसे चुनाव में खड़े होने के लिए अनुरोध करें।

एक स्वस्थ सामाजिक संस्कृति में ऐसा संभव हो सकता है। हमें इसे ही उपलब्ध करने का प्रयास करना चाहिए।
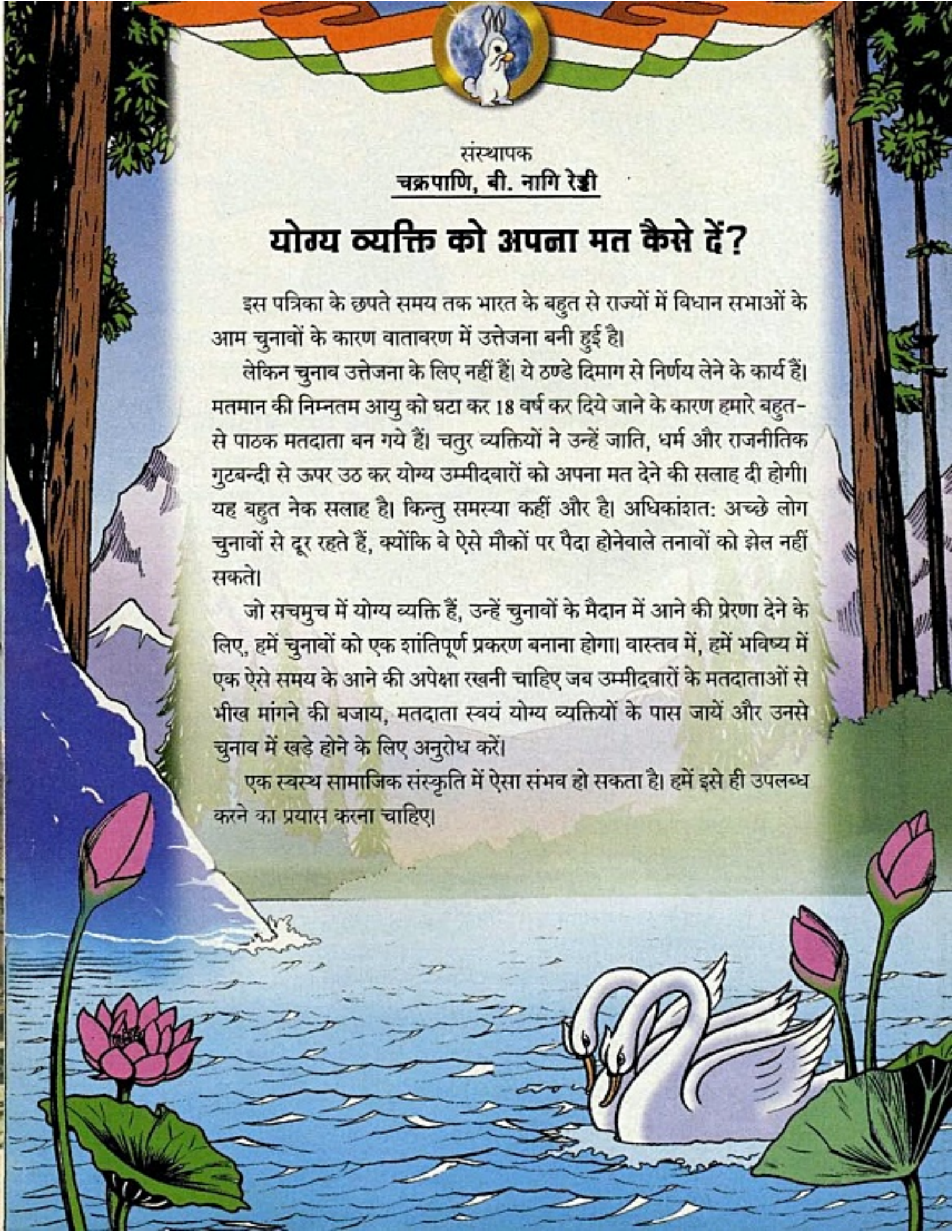
समाचार-झलक

जेब में पिशाच

जिसकी जेब में सिगरेट का एक पैकेट है, वह वास्तव में अपनी जेब में एक रक्त चूषक पिशाच पाल रहा है। जब वह सिगरेट का धुआं छोड़ता है तब उसे यह पता नहीं होता कि हर सिगरेट उसकी जिन्दगी के ग्यारह मिनट चूस लेता है। बीस सिगरेटों का एक पैक जीवन की अवधि को तीन घंटे चालीस मिनट कम कर देता है।

नवम्बर 1999 में किये गये एक आकलन के

अनुसार, विश्व भर में 1.2 अरब धूम्रपान करने वाले थे। वर्ष के अन्त तक, उनमें से चालीस लाख व्यक्ति धूम्रपान-सम्बन्धी रोग से मर गये, ऐसा विश्वास किया जाता है।

लम्बी उम्र में हँसते हुए जाइए

जिस प्रकार धूम्रपान करने से जीवन खत्म हो जाता है, हँसने से ज़िन्दगी मिलती है। यद्यपि यह सार्वभौमिक मान्यता है, फिर भी इसे प्रमाणित करने के लिए आंकड़ें नहीं हैं। जो भी हो, हँसी जीवन को

आनन्द मय बना देती है। विगत 9 जनवरी को दुनिया के 500 हँसी क्लबों ने 'विश्व हँसी दिवस' मनाया।

ब्रह्माण्ड एक परिवार है

कुछ लोगों के लिए, जिस मकान में वे रहते हैं, वही उनका परिवार है। कुछ अन्य लोगों के लिए उनके गाँव या शहर उनके परिवार हैं। कुछ ऐसे भी हैं जो पूरे देश को अपना परिवार मानते हैं। परन्तु कुछ और लोग भी हैं जो पूरी पृथ्वी को अपना परिवार समझते हैं- 'वसुधैव कुटुम्बकम'।

किन्तु, अब ब्रिटिश खगोल वैज्ञानिकों ने पता

लगाया है कि प्रकाश एक ऐसे ग्रह से आता है जो हमारे सौर मंडल से बाहर है। दूसरे शब्दों में, हमारा जीवन अति दूरस्थ और अज्ञात शक्तियों से प्रभावित होता है। सच! समस्त ब्रह्माण्ड ही हमारा परिवार है।

इस माह जिनकी जयन्ती है:

बादशाह शाहजहाँ और बेगम मुमताज के लिए एक बेटे का जन्म स्वभावतः एक बहुत बड़ी खुशी का मौका था। यह सन् 1615 में 20 मार्च की बात है। महल आनन्द से झूम उठा।

राजकुमार, दारा सिकोह, बड़ा होकर एक प्रतिभाशाली युवक बना। वह दयालु था और सबके प्रति शिष्ट व्यवहार करता था। उसमें और विशेष बात यह थी कि वह विलास और आमोद-प्रमोद पर समय नष्ट नहीं करता था, जिनमें सामान्यतः सभी राजकुमार लिप्त रहते थे। उसका अधिकांश समय वेद और उपनिषद जैसे महान भारतीय शास्त्रों के अध्ययन में व्यतीत होता था। वह महल में ज्ञानी पंडितों को निमंत्रित करता और लगातार हप्तों तक दर्शन और अध्यात्म पर उनके साथ चर्चा करता था।

दारा सिकोह

उन्होंने कुछ उपनिषदों और गीता का फारसी में अनुवाद किया। उसे पूर्ण विश्वास था कि जहाँ तक जीवन के आध्यात्मिक लक्ष्य का प्रश्न है, हिन्दू और मुस्लिम विचारों में कोई सार भूत अन्तर नहीं है। दोनों मतों में समानता दिखाने का प्रयास करते हुए उन्होंने समुद्र संगम (दो समुद्रों का मिलन) नाम की एक पुस्तक लिखी।

दुर्भाग्यवश, जब राजकुमार दारा ऐसे उदात्त कार्य में व्यस्त था, तब उसका छोटा भाई औरंगजेब उसकी हत्या का षड्यंत्र रच रहा था। यह अवसर उसे तब मिला जब शाहजहाँ बीमार पड़ गया। दारा एक युद्ध में हार गया। उसने दादर के गवर्नर जीवन खाँ नाम के एक अफगान के घर में पनाह ली। एक बार दारा ने जीवन खाँ की जान बचाई थी। लेकिन उस कपटी ने अपने त्राता को औरंगजेब के हवाले कर दिया।

औरंगजेब ने अपनी बीभत्स क्रूरता के नशे में अपने उदात्त अग्रज को, जो गद्दी का उत्तराधिकारी था, दिल्ली की गलियों में घुमाया। सन् 1659 में 30 अगस्त को उसकी हत्या कर दी गई। उसके बेटे, सुलेमान को सन् 1662 में जेल के अन्दर मार दिया गया। औरंगजेब ने अपने अन्य दो भाइयों-मुराद और शुजा को भी मरवा दिया।

दारा सिकोह के वचन:

यह दृष्टिकोण, कि परमात्मा के दर्शन इस लोक में नहीं बल्कि परलोक में हो सकते हैं, विवेक-सम्मत नहीं है; क्योंकि, यदि वह सर्वशक्तिमान है, तब निश्चय ही वह अपने को अभिव्यक्त कर सकता है और किसी भी प्रकार से, कहीं भी और कभी भी दर्शन दे सकता है। जो उसे यहाँ (इस लोक में) नहीं देख सकता, उसे परमात्मा को वहाँ (परलोक में) देख पाना बहुत कठिन होगा।

मैंने अपनी आत्मा की कामना से, जो स्वयं विष्णु है, अपने मन को मंदार पर्वत (मथनी) और अपने संकल्प-विकल्प को देव और असुर (दोनों पक्षों में मंथन करने वाले) बना कर शास्त्रों के सागर का मंथन किया और इससे ऐसा ज्ञान-रत्न प्राप्त किया जो न देवों को मिला न असुरों को, यद्यपि समुद्र मंथन से उन्होंने चौदह रत्न निकाले।

केवल परमात्मा की आराधना और उसके ज्ञान से मुझे "समुद्र-संगम" या दो समुद्रों का मिलन को पूरा करने की शक्ति मिली।

चन्दामामा

फरवरी २०००

उत्तर

1. गोस्वामी तुलसीदास और बिल्वमंगल

2. अ. बलराम अभिमन्यु का मामा था

   ब. उग्रसेन प्रद्युम्न का परदादा था

   स. घटोत्कच शिशुपाल का भतीजा था

   द. परीक्षित कीचक के भाई का पोता था

   इ. कर्ण सुभद्रा का चचेरा भाई था

3. i. चरक रचित चरक संहिता, जो कनिष्क काल में पहली शताब्दी में हुआ।

   ii. सुश्रुत रचित सुश्रुत संहिता, जो लगभग द्वितीय शताब्दी में हुआ होगा।

   iii. कल्हन रचित राजतरंगिनी, जो कश्मीर के राजाओं की वंशावलि है। कल्हन बारहवीं शताब्दी में हुआ था।

   iv. कौटिल्य (चाणक्य) रचित अर्थशास्त्र, जो ईसा पूर्व चौथी और तीसरी शताब्दी में हुआ।

   v. भरत मुनि रचित नाट्य शास्त्र, जो ईसा पूर्व की दूसरी शताब्दी और ईसा के बाद पहली शताब्दी में हुआ।

सर्जनात्मक स्पर्द्धाएँ

पाठकों को आमन्त्रित करता है
चन्दामामा

निम्नलिखित क्षेत्रों में कल्पना की उड़ान और खोज भरे सर्जनात्मक प्रतियोगों में भाग लेने के लिए :

छाया चित्र
अनुशीर्षक प्रतियोगिता

१. छायाचित्र अनुशीर्षक प्रतियोगिता पृष्ठ के लिए: उदीयमान छविकार एक युगल-चित्र भेज सकते हैं, जिसमें दोनों चित्र एक दूसरे से किसी प्रकार सम्बन्धित हों। दोनों चित्रों में सम्बन्ध के बारे में छविकार का अपना स्पष्टीकरण साथ में अवश्य होना चाहिए।

चयनित युगलचित्रों के लिए

पारितोषिक : ५०० रु.

प्रतियोगिता के लिए छाया चित्र किसी समय भेजे जा सकते हैं।

२. चन्दामामा द्वारा घोषित मुहावरा या लोकोक्ति के अर्थ को स्पष्ट करते हुए पाठक १५०-१७५ शब्दों में एक उपाख्यान या चुटकुला, निजी अनुभव या कहानी (नई/पुरानी) भेज सकते हैं। कृपया याद रखें कि आप की रचना में कहानी का तत्व हो, किन्तु वह मूल कथा न हो जिससे यह लोकोक्ति या मुहावरा लिया गया है।

वर्तमान प्रतियोग के लिए
लोकोक्ति :
"साँच को आँच क्या"
चयनित रचना पर पारितोषिक : ५०० रु.
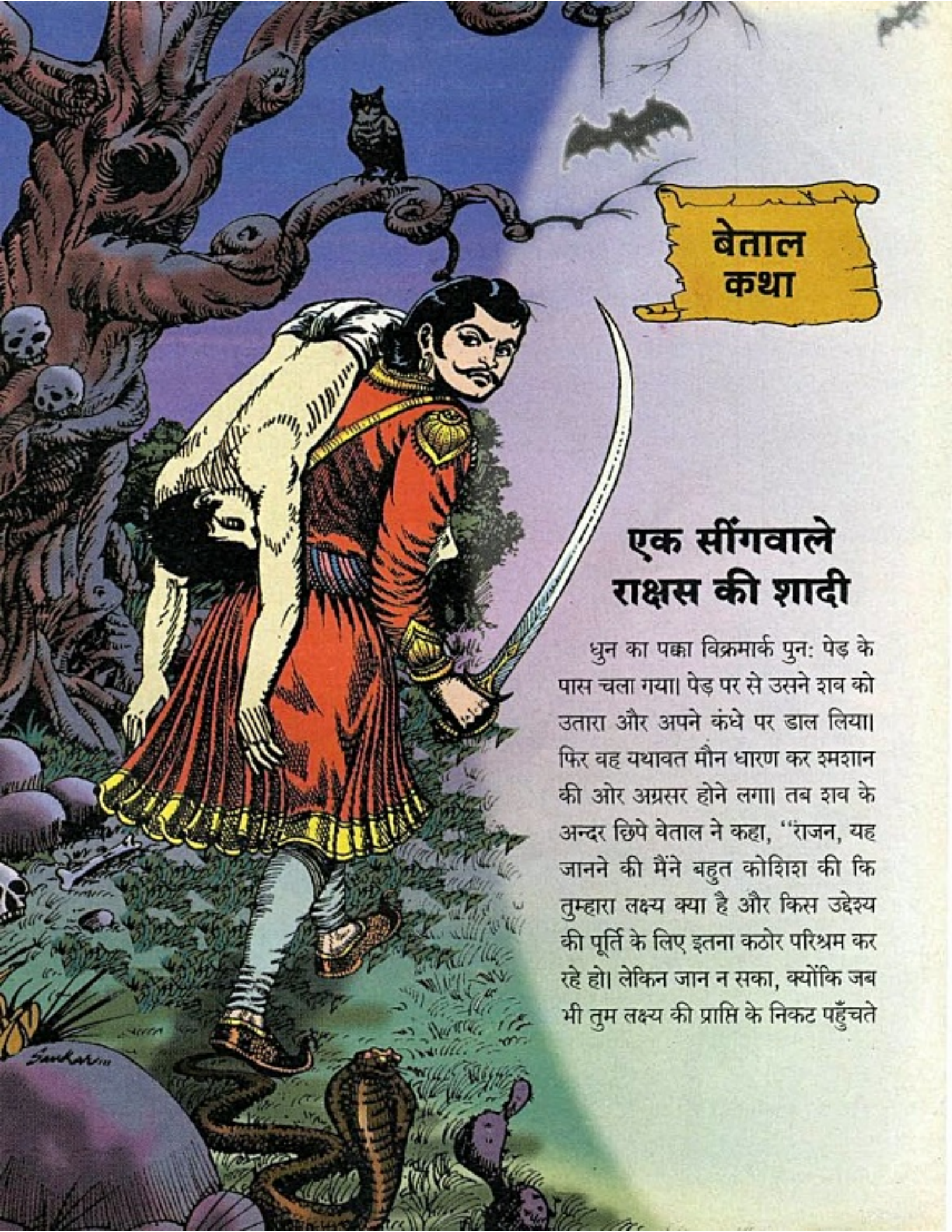
सभी प्रस्तुतियाँ प्राप्त करने की

अन्तिम तिथि ३१ मार्च, २०००

पुरस्कृत रचना चन्दामामा के **जून** २००० अंक में प्रकाशित होगी।

बेताल कथा

एक सींगवाले राक्षस की शादी

धुन का पक्का विक्रमार्क पुन: पेड़ के पास चला गया। पेड़ पर से उसने शव को उतारा और अपने कंधे पर डाल लिया। फिर वह यथावत मौन धारण कर श्मशान की ओर अग्रसर होने लगा। तब शव के अन्दर छिपे बेताल ने कहा, ''राजन, यह जानने की मैंने बहुत कोशिश की कि तुम्हारा लक्ष्य क्या है और किस उद्देश्य की पूर्ति के लिए इतना कठोर परिश्रम कर रहे हो। लेकिन जान न सका, क्योंकि जब भी तुम लक्ष्य की प्राप्ति के निकट पहुँचते

हो तो या अपने उद्देश्य की उपेक्षा कर देते हो या उसे भूल जाते हो। इसलिए कभी तुम्हारा लक्ष्य पूरा नहीं हो पाता। कुछ अविवेकी लोग तुम्हारी तरह अपने परिश्रम के फल के निकट आकर भी उसे प्राप्त करने में असमर्थ और असफल रह जाते हैं। सुवंती नाम की राजकुमारी भी ऐसी ही थी। उसकी कहानी ध्यान से सुनो।''

इतना कह कर वेताल राजकुमारी सुवंती की कहानी यों सुनाने लगा:

चन्द्रगिरि के राजा चन्द्रसेन की एक मात्र संतान उसकी पुत्री राजकुमारी सुवंती थी। पुत्र न होने के कारण राजा ने उसे बेटे के समान ही उसका पालन-पोषण किया। सुवंती एक राजकुमार के समान घुड़ सवारी, खड्ग युद्ध, धनुर्विद्या तथा अन्य वीरोचित विद्याओं में प्रवीण हो गई। आखेट में उसकी विशेष रुचि थी। वह अपने पिता के साथ ही जंगलों में जाकर मृगों और हिंस्र पशुओं का शिकार किया करती थी। उसके साहस, युद्ध कौशल और वीरता देख कर लोग दाँतों तले उंगली दबाते थे।

जब राजकुमारी बड़ी हुई तो राजा और रानी दोनों को उसकी शादी की चिंता हो गई। अब राजा को उसका पुरुष वेश में घूमना और आखेट के लिए जाना अच्छा नहीं लगता था। एक बार पड़ोसी राजकुमार के साथ सुवंती का विवाह होनेवाला था किन्तु उसके पुरुषोचित व्यवहार के कारण यह सम्बन्ध नहीं स्थापित हो सका। महारानी तबसे बहुत चिंतित रहने लगी। किसी काम में उसकी रुचि नहीं रही।

एक दिन सुवंती ने देखा कि उसकी माँ बहुत उदास है और अरुचिपूर्वक खाना खा रही है। उसने अपनी माँ के गले में हाथ डाल कर उसे सान्त्वना देते हुए कहा, ''मेरे विवाह को लेकर चिंता करने की जरूरत नहीं है। पिता जी के सिंहासन के योग्य उत्तराधिकारी को चुनकर एक दिन मैं स्वयं ले आऊँगी।''

बहुत दिनों से सुवंती की इच्छा थी कि वह जंगल में अकेली आखेट के लिए जाये। इसलिए एक दिन वह सवेरे ही पुरुष वेश में तैयार होकर घोड़े पर सवार हो जंगल की ओर निकल पड़ी।

वह कार्तिक का महीना था। इसलिए पूरा जंगल हरा-भरा था और पेड़-पौधे रंग-बिरंगे फूलों से लदे हुए थे। हल्का-हल्का कोहरा होने के कारण जंगल की सम्पूर्ण नैसर्गिक छटा स्वर्ग की तरह

सम्मोहक लग रही थी। वह शिकार की बात भूल गई और प्राकृतिक सौन्दर्य को निहारती हुई जंगल में बहुत दूर निकल गई। वह चलते-चलते काफी थक चुकी थी, इसलिए घोड़े को चरने के लिए छोड़ कर स्वयं विश्राम के लिए एक वृक्ष की छाया में लेट गई। लेटते ही उसकी आँखें लग गईं।

घोड़े की हिनहिनाहट से जब उसकी आँख खुली तो वह सामने के दृश्य को देख कर घबरा गई। सरोवर की ओर से एक बाघ उसकी ओर तेजी से आ रहा था। वह अपना धनुष-बाण उठाने ही जा रही थी कि बाघ गुर्राता हुआ उस पर झपट पड़ा। बाघ के पंजे से उसका दायां हाथ लहुलुहान हो गया। बाघ के अचानक आक्रमण के कारण भय से उसकी आँखें बन्द हो गईं और उसे अपने प्राणों की आशा जाती रही। लेकिन दूसरे ही क्षण उसे बाघ की गुर्राहट के बदले उसके कराहने की आवाज सुनाई पड़ी। साहस करके उसने आँखें खोलीं तो देखा कि बाघ कलेजे में तीर लग जाने के कारण दूर गिरा छटपटा रहा है और अन्तिम सांस ले रहा है।

तभी उसकी नजर एक सुन्दर धनुर्धारी युवक पर पड़ी जो उसकी ओर ही आ रहा था।वह उससे कुछ बोलना चाह रही थी किन्तु हाथ के घाव से निरन्तर रक्तश्राव होने के कारण वह अचेत हो गई।

जब उसकी चेतना वापस लौटी तो उसने अपने आप को एक पर्णशाला में शैय्या पर लेटा हुआ पाया। उसकी दायीं भुजा पर पट्टी बंधी हुई थी और वह काफी पीड़ा अनुभव कर रही थी। कुछ दूरी पर वह धनुर्धारी युवक कुछ जड़ी-बूटियाँ पीस कर लेप तैयार कर रहा था। सुवंती की आँखें खुली

देख कर उससे युवक ने पूछा, -"अब कैसी हो? क्या अब भी पीड़ा बहुत है?"

"आखिर बाघ के पंजे का प्रहार है। गरदन पर पंजा पड़ता तो तत्क्षण मृत्यु हो जाती। फिर भी, भुजा का घाव बड़ा और गहरा है। दर्द तो रहेगा ही।" पट्टी को देखती हुई और पीड़ा अनुभव करती हुई सुवंती बोली।

"घाव चाहे कितना भी बड़ा हो, जो लेप मैं बना रहा हूँ वह महीने भर में घाव तो क्या, घाव का निशान भी मिटा देगा। जिनके हाथ-पाँव कट चुके होते हैं, चिकित्सा से उन्हें भी पूर्ण चंगा कर देनेवाला शस्त्र-चिकित्सक हूँ मैं।" यह कह कर अपने दोनों हाथ दिखाता हुआ वह युवक मुस्कुराने लगा।

सुवंती के पूछने पर अपना परिचय देते हुए उसने बताया कि वह कोदंडपाणि नाम का एक
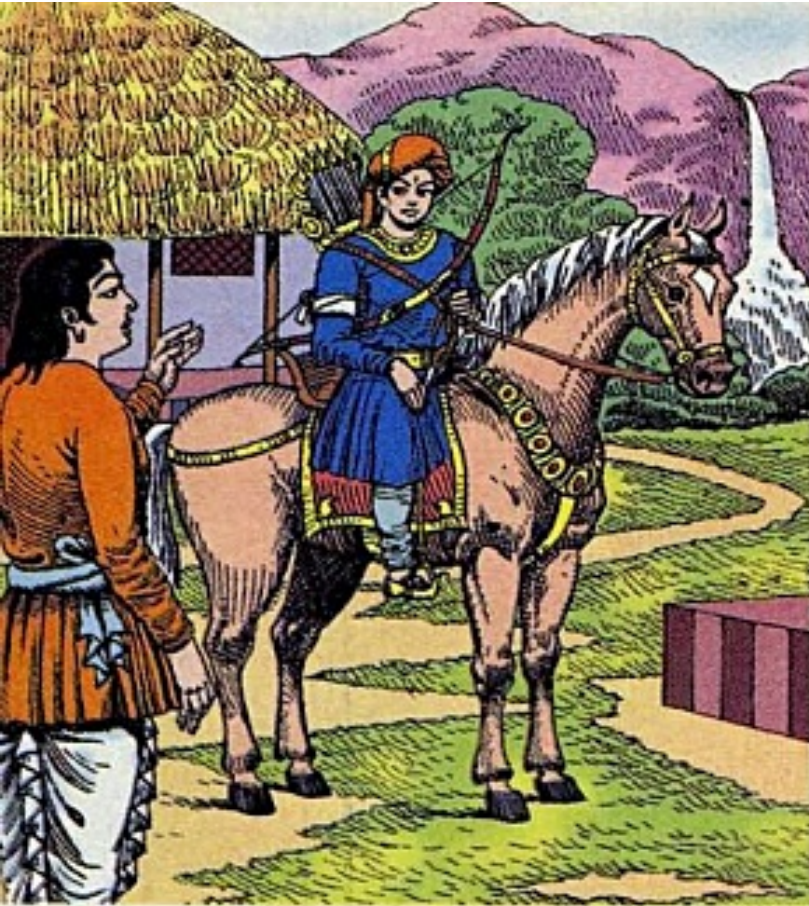
शस्त्र-चिकित्सक है। पिता की मृत्यु के पश्चात उसने भी परिवार की परम्परागत वृति अपना ली वन के आदिवासियों और जन-जातियों की नि:शुल्क चिकित्सा ही उसका धर्म है। वन्य पशुओं की चिकित्सा करना भी उसके कर्तव्य में शामिल है।

''तुम्हारे अपने अश्व पर ही तुम्हें अपनी पर्णशाला तक लाया। तुम्हारी भुजा का घाव सीकर जब पट्टी बाँध रहा था, तभी जाना कि तुम स्त्री हो। पुरुष वेश में रहने का क्या कोई खास प्रयोजन है?'' अपने विषय में विस्तार से बता चुकने के बाद कोदंडपाणि ने सुवंती का परिचय जानना चाहा।

सुवंती नहीं चाहती थी कि युवक यह जाने कि वह वहाँ की राजकुमारी है। उसने अपना वास्तविक परिचय छिपाते हुए कहा, - ''नौकरी की खोज में राजधानी से अकेली निकली थी, इसलिए पुरुष वेश धारण करना पड़ा। तुम्हारी सहायता के लिए सदा कृतज्ञ रहूँगी। दिन ढल रहा है, इसलिए अब चलूँगी।''

कोदंडपाणि ने घाव के लिए आवश्यक लेप देकर उसे घोड़े पर बिठाते हुए कहा, ''सावधानी से जाना। बिना रुके जाओगी तो शाम तक पहुँच जाओगी।''

महल में पहुँच कर सुवंती कोदंडपाणि के बारे में ही सोचती रही और मन ही मन उसके साहस और सेवा-भावना की प्रशंसा करती रही। हिंसक पशुओं के प्रति भी उसके मन में उतना ही दया-भाव है, यह सोच कर उसके विशाल हृदय के सामने नत मस्तक हो जाती। वही मेरे वर के योग्य है, उसे ऐसा लगा। इसलिए जैसे ही उसका घाव ठीक हुआ, वह पुन: उसी जंगल की ओर चल पड़ी।

इस बार उसने एक गरीब युवती का रूप धारण किया। वह चाहती थी कि कोदंडपाणि उसे एक साधारण स्त्री के रूप में स्वीकार करे न कि राजकुमारी के बैभव के कारण। इसलिए बिवाह होने तक अपने राजकुमारी होने का रहस्य उसे बताना नहीं चाहती थी।

इस बार सरोबर तक पहुँचते-पहुँचते शाम हो गई। उस समय सरोवर में एक सींगवाला एक राक्षस स्नान कर रहा था। उसे देखते ही सुवंती डर गई और चीखती हुई दौड़कर बापस आने लगी।

उसकी चीख सुन कर राक्षस सरोवर से बाहर आ गया और एक-दो डग चलने के बाद ही सुवंती के पास पहुँच गया। उसे बह अपने

कंधे पर डाल कर पर्वत-स्थित अपने क़िले में ले गया।

''लड़की, मुझसे डरो मत! मैं तुझे खाऊँगा नहीं, बल्कि पूरे जंगल को साक्षी मान कर तुमसे विवाह करूँगा।'' यह कह कर उसने कमरे का दरवाजा बन्द कर दिया और तुरन्त फिर कहीं बाहर चला गया।

सुवंती रात भर सो न सकी और सोचती रही कि राक्षस के चंगुल से कैसे निकला जाये। अन्त में कोई रास्ता न देख कर यही विचार किया कि इससे बचने का केवल एक ही उपाय है - बुद्धि बल।

दूसरे दिन राक्षस एक घड़ा दूध और केलों के कई गुच्छों के साथ आया और दरवाजे पर बैठ कर खाने लगा। फिर बादलों के गर्जन के समान विकट रूप से हँसता हुआ बोला, -''बोल लड़की, हमारे विवाह का शुभ मुहूर्त्त कब है?''

यह सुन कर निकट आती हुई और मन्द-मन्द मुस्काती हुई सुवन्ती बोली, -''आप तो अन्तर्यामी हैं स्वामी। आपने कैसे जान लिया कि मैं एक योग्य वर की तलाश में निकली हूँ और आप से विवाह करना चाहती हूँ। आप सचमुच मुझे बहुत अच्छे लगते हैं। किन्तु...''

''किन्तु क्या?'' राक्षस ने फिर वैसी ही हँसी हँसते हुए पूछा।

''किन्तु, आप के सिर पर बीचोबीच सिर्फ़ एक सींग अच्छा नहीं लगता। इससे आपका सुन्दर रूप विकृत हो जाता है। इसे आप निकलवा दें तो आप का रूप सौन्दर्य निखर जायेगा।'' सुवंती ने मुस्कुराते हुए कहा।

यह सुन कर राक्षस उदास हो गया। और बोला, -''मेरी सारी शक्ति इसी सींग के कारण है। समझो इसी में मेरे प्राण हैं। तुम्हें यह अच्छा नहीं लगता तो इसकी ओर देखो नहीं।''

''लेकिन स्वामी, सुन्दरता के लिए न सही, कम से कम मेरे सुहाग के लिए तो उसे निकालना ही होगा। बचपन में ज्योतिषी ने मेरी कुंडली देख कर कहा था कि एक आँख, एक हाथ, एक पाँव वाले मनुष्य से अथवा एक सींग वाले राक्षस से अथवा एकलौते बेटे से विवाह करोगी तो उसी दिन विधवा हो जाओगी। यदि इस सींग को निकालना न चाहें तो दूसरा सींग भी लगवा लें। इससे रूप की विकृति कम हो जायेगी और मेरी कुंडली का दोष भी मिट जायेगा।'' सुवंती ने कहा।

यह सुन कर राक्षस सोच में पड़ गया।फिर थोड़ी देर में दुखी होकर बोला, ''मेरे पिता के दोनों सींग किले में कहीं पड़े होंगे। लेकिन उन्हें अपने सिर पर लगाना क्या संभव हो पायेगा?''

सुवंती ऐसे ही अवसर की प्रतीक्षा कर रही थी जिसमें उसे कोदंडपाणि को बुलाने की आवश्यकता पड़ जाये। उसने झट कहा, -''सरोवर के पास ही एक कुटीर में कोदंडपाणि नाम का एक कुशल शल्य चिकित्सक रहता है। उसके लिए यह काम बायें हाथ का खेल है।''

यह सुन कर राक्षस प्रसन्न हो गया और फिर उसी प्रकार हो-हो-हो..... करके हँसता हुआ दरवाजा बन्द करके बाहर चला गया।

सुवंती ने किले में इधर-उधर घूमती हुई एक कमरे में अशर्फियों का पहाड़-सा ढेर देखा जो सहसा उसे विश्वास नहीं हुआ।

शाम को कोदंडपाणि को लेकर राक्षस किले में वापस आ गया। उसने सुवंती का परिचय देते हुए कोदंडपाणि से कहा, -'' यह मेरी होनेवाली पत्नी है।'' कोदंडपाणि सुवंती को स्त्री वेश में पहचान न सका, क्योंकि सुवंती तब उससे पुरुष परिधान में मिली थी।

''मेरे होनेवाले पति के सिर पर दो सींग जड़ने के लिए ही आप को यहाँ बुलाया गया है।'' कोदंडपाणि की आँखों में देखते हुए इस आशा से सुवंती ने कहा कि शायद वह उसे पहचान ले।

किन्तु कोदंडपाणि ने सुवंती की ओर ध्यान न देकर राक्षसके सींग की जाँच की और कहा, -''सिर पर दो सींग लगाने के पूर्व बीच का सींग निकालना होगा। फिर दोनो सींगों को समान दूरी पर बैठाना होगा।

इससे राक्षस डरता हुआ बोला, -'' यह मेरा एक मात्र सींग प्राकृतिक रूप से जन्मजात है। इसे निकाल देने पर कहीं मेरी शक्ति लुप्त न हो जाये।''

''लेकिन ससुर जी के दो सींग पड़े जो हैं। उन्हें लगते ही आप की शक्ति दुगुनी हो जायेगी।'' सुवंती ने राक्षस को उत्साहित करते हुए कहा।

कोदंडपाणि ने राक्षस को लेट जाने के लिए कहा और बेहोश करने के लिए उसकी नाक में दवा डाली। राक्षस नींद में खर्राटे भरने लगा। कोदंडपाणि ने एक शल्य यंत्र से उसका एक सींग झट से निकाल कर कोने में फेंक दिया।

''चलो बला टली। इसकी सारी शक्ति खत्म हो गई और इसकी गुलामी से मुझे मुक्ति मिल गई।

अब हमलोग चलते हैं।'' सुवंती ने खुश होकर कोदंडपाणि से कहा।

लेकिन कोदंडपाणि राक्षस के सिर पर दो सींगों को बैठाने में इतना मग्न था कि उसने सुवंती की बातों पर ध्यान नहीं दिया। तब सुवंती ने उसे बाघ द्वारा घायल की गई अपनी भुजा के घाव का दाग दिखाया जिसे पहचान कर वह आश्चर्य से बोला, -''अरे तुम!बाघ को देखते ही बेहोश हो जाने वाली अब राक्षस से शादी करनेवाली हो!''

''इस राक्षस से मेरी शादी? असंभव। इसने बलपूर्वक मुझे कैद कर लिया था। इससे छुटकारा पाने के लिए ही मैंने दो सींग लगवाने की शर्त्त रखी ताके उस काम के बहाने तुम्हें बुला सकूँ और इस राक्षस की कैद से मुक्त हो सकूँ। चलो, इस किले से बाहर चलते हैं। इसे ऐसे ही मरने दो।'' सुवंती ने कोदंडपाणि से कहा।

कोदंडपाणि तब तक राक्षस के सिर पर दोनों सींग लगा चुका था। राक्षस ने दर्द से एक दो बार कराहा। कोदंडपाणि ने बेहोश करने की थोडी और दवा उसकी नाक में डाल दी। वह फिर गाढ़ी निद्रा में सो गया। प्रात: काल ठीक होकर वह उठ बैठा।

जाने से पूर्व उसने राक्षस से कहा, -''यह लड़की तुमसे विवाह करना नहीं चाहती। अपने शल्य-कार्य के लिए जो सोना देने का वादा किया था, वह अपने पास ही रखो और उसके बदले इस लड़की को छोड़ दो।''

राक्षस कुछ सोच कर बोला, -''मैं अपने वंश में एकल सींग का एक मात्र राक्षस हूँ। इस कारण सभी मेरा मजाक उड़ाया करते थे। इसी एकल सींग

के कारण राक्षस राज की बेटी ने मुझे स्वीकार नहीं किया। लेकिन अब तो दो सींगों के कारण मुझसे विवाह के लिए झट तैयार हो जायेगी।''

यह सोच कर वह खुशी से उछल पड़ा और किले से बाहर निकल गया।

सोने के सिक्कों को एक बोरे में भर कर कोदंडपाणि को देते हुए सुवंती ने कहा, -''तुमने दो बार मेरे प्राणों की रक्षा की है। इसलिए इन सिक्कों के हकदार हो।''

इतना कह कर वह राजधानी लौट गई।

बेताल ने यह कहानी सुना कर प्रश्न किया, -''राजन! राजकुमारी सुवंती का व्यवहार क्या अविवेक और मूर्खता से भरा हुआ नहीं है? वह कोदंडपाणि को चाहती थी और उसी को पाने के लिए वह दुबारा जंगल में गई। लेकिन उसको पा

मुस्कान कठिनाइयों पर उसी तरह क्रिया करती है जैसे धूप बादलों पर। यह उन्हें तितर-बितर कर देती है। -श्रीमाँ

लेने के बाद भी उसने उससे अपना सच्चा परिचय छिपा कर रखा और अपने हृदय की बात नहीं बताई। कोदंडपाणि सुन्दर और साहसी युवक था। साथ ही एक कुशल चिकित्सक भी। उसने सुवंती की दो बार जान बचाई। सुवंती उसे प्यार भी करती थी। फिर भी उसने उससे विवाह क्यों नहीं किया? क्या यह सुवंती की मूर्खता नहीं है? इसका उत्तर जान कर भी नहीं बताओगे तो तुम्हारे सिर के टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे''

राजा विक्रमार्क ने अपना मौन भंग करते हुए कहा, -''राजकुमारी एक ऐसे पुरुष से विवाह करना चाहती थी जो उसके पिता के सिंहासन का योग्य उत्तराधिकारी बन सके। कोदंडपाणि से, पहली मुलाकात में उसे ऐसा आभास हुआ कि उसमें राजा के गुण हैं। लेकिन राक्षस के किले में उसके आचरण से सुवंती को मालूम हुआ कि वह अपनी वृति की परिधि में कैद है जिसे तोड़ कर बाहर आना उसके लिए असंभव है। वन्य जीवन के प्रति तथा अपनी वृति के प्रति वह ईमानदार अवश्य है, लेकिन एक योग्य शासक का विशाल हृदय उसके पास नहीं है। इसलिए, जब सुवंती ने अनुभव किया कि कोदंडपाणि वह व्यक्ति नहीं है जिसकी इसे तलाश है, तो उसके परोपकार के बदले कृतज्ञता प्रकट करके उसे अपना वास्तविक परिचय दिये बिना ही राजधानी लौट आई। इससे सुवंती की मूर्खता नहीं, बल्कि उसकी गहरी दृष्टि, विवेकशीलता और दूरदर्शिता झलकती है।''

इस प्रकार राजा का मौन भंग होते ही शवसहित वेताल पुन: पेड़ पर जा बैठा।

बहादुर मर्द

नारायण और सम्पूर्णा का जब दस साल पहले विवाह हुआ था तो गाँववालों ने मुक्त कंठ से इस नवदम्पति की सराहना की थी और इनके सुखी जीवन की कामना करते हुए यह आशा की थी कि ये गाँव में एक आदर्श परिवार की मिसाल बनेंगे।

परन्तु ऐसा नहीं हुआ। धीरे-धीरे नारायण बुरी आदतों का शिकार बन गया। उसका स्वास्थ्य गिरने लगा। आर्थिक स्थिति खराब होने लगी। बात-बात पर वह नाराज हो जाता और सम्पूर्णा पर हाथ उठा देता।

पड़ोसियों ने उसे बहुत समझाया कि बुरी आदतें छोड़ दो। पत्नी को मारना-पीटना असभ्यता है। तुम्हारे बच्चों पर इसका बुरा प्रभाव पड़ेगा और सारे परिवार का अनिष्ट होगा।

परन्तु नारायण पर इसका कोई असर नहीं हुआ। उल्टा उसने नशे में कहा, - "अपनी पत्नी को मारूँ या पीटूँ, इससे तुम सब को क्या लेना-देना। पाप-पुण्य और स्वर्ग-नरक कुछ नहीं होता। इनका नाम लेकर मुझे न डराओ।" इस प्रकार वह और भी उन्हें गालियाँ देता।

एक दिन सम्पूर्णा तालाब पर कपड़े धोने गई थी। वहाँ उसकी भेंट रुक्मिणी से हो गई। रुक्मिणी एक प्रौढ़ा और अनुभवी स्त्री थी। वह पारिवारिक जीवन के कटु-मधु अनुभवों से गुजर चुकी थी और स्त्रियों की समस्या और पीड़ा समझती थी। गाँव की दुखी स्त्रियाँ प्राय: उससे अपने दिल का दर्द बतातीं और अपने दुख से छुटकारा पाने के लिए उसकी सलाह माँगतीं। सम्पूर्णा ने भी उसे अपने पति के बारे में बताते हुए कहा कि वह मुझे कितना सताता है। वह अपना कष्ट रुक्मिणी ने कहा, - "तुम्हारे पति के स्वभाव और व्यवहार के बारे में औरों से भी सुन चुकी हूँ। अपने पति की मार-पीट से बचना हो और उजड़ते परिवार को बचाना हो तो साहस से काम लेना होगा। हो सकता है यह तुम्हारे स्वभाव के विरुद्ध हो। परन्तु इसके अलावा और कोई चारा नहीं। या फिर तथाकथित पतिव्रता स्त्रियों की तरह सब अत्याचार सहते रहो और मुँह न खोलो और सारी जिन्दगी अपने भाग्य पर रोती रहो।"

इतना कह कर उसने सम्पूर्णा के कान में कुछ कहा।

रुक्मिणी की बातें सुन कर उसका चेहरा फीका पड गया। उसने कहा, - "दीदी, तुम्हारी बातें ठीक लगती हैं, लेकिन क्या मैं ऐसा कर पाऊँगी। मैं तो कभी-कभी सोचती हूँ कि इस कष्ट से बचने के लिए मायके चली जाऊँ।"

इस पर रुक्मिणी ने सिर हिलाते हुए कहा, - "नहीं, नहीं, कभी नहीं। पति के दुर्व्यवहार से बचने के लिए मायके चले जाना किसी विवाहिता के लिए अच्छा नहीं होता। यह समस्या का वास्तविक समाधान नहीं है। इसके अतिरिक्त मैं तुम्हारे मायके के बारे में भी जानती हूँ। जिन माता-पिता ने तुम्हें पाला-पोसा, वे अब नहीं रहे। भाई और भाभी की अपनी समस्याएँ होती हैं।"

सम्पूर्णा को ऐसा लगा मानो रुक्मिणी उसके मायके के बारे में उससे कहीं अधिक जानती है। काफी सोच-विचार के बाद अन्त में उसने यही निर्णय लिया कि वह रुक्मिणी की ही सलाह मानेगी।

उस दिन भी नारायण रात को बहुत देर से आया और नशे में चिल्लाता हुआ घर में घुसा, - "कहाँ मर गई पूर्णा? तुम्हारा पति कब से बुला रहा है। तुम्हें कोई चिंता नहीं। तुम आराम से खा कर सो गई। मैं भूखा चिल्ला रहा हूँ।"

जब बहुत देर तक सम्पूर्णा नहीं आई तो वह क्रोध में बड़बड़ाता हुआ एक कोने से एक डंडा उठा कर उसके कमरे की ओर बढ़ा।

तभी चण्डी रूप धारण किये अपने कमरे से निकलती हुई सम्पूर्णा बोली, -"आज फिर तुम नशे में आये हो। मैं बहुत दिनों से तुम्हारा व्यवहार देख रही हूँ। तुम बुरी संगति और बुरी आदतों के दल-दल में गिरते जा रहे हो। तुम अपने निर्दोष बच्चे को भी सताने लगे हो और उसका भविष्य नष्ट कर रहे हो। यह सब और बहुत दिनों तक मैं नहीं सह सकती। और तुम्हारी ये आदतें छुड़ा कर ही रहूँगी।" इतना कह कर उसने नारायण के हाथ से डंडा छीन लिया और उसे पीटने लगी।

नारायण अपनी पत्नी के अप्रत्याशित विकराल रूप से घबरा कर पलंग के नीचे छिप गया। फिर भी सम्पूर्णा उसे पीटती रही। और कहा, -"कसम खाओ कि अब से अपने बुरे दोस्तों के साथ नहीं रहोगे और न शराब पीओगे, क्योंकि शराब ही तुम्हारे दुराचरण का मूल कारण है।"

पलंग के नीचे छिपे हुए ही उसने कहा, - "कसम खाता हूँ कि अब से शराब नहीं पीऊँगा और न तुझे, न बेटे को मार-पीट करूँगा। लेकिन पलंग से बाहर आऊँ या न आऊँ, यह मेरी इच्छा है। आखिर बहादुर मर्द जो हूँ।"

नारायण की इस बात पर सम्पूर्णा खिल खिलाकर हँस पड़ी और डंडेको फेंकती हुई बोली, - "चलो, अब तो बाहर आओ। तुम सचमुच बहादुर मर्द हो, क्यों कि शराब जैसे राक्षस से बच निकलना बहादुर मर्द का ही काम है।"

स्वर्ण-सिंहासन

4

*[अब तक: कौंडिन्य के राजा श्रीदत्त ने अपने पुत्र विजय दत्त को शिक्षा समाप्त होने से पूर्व ही गुरुकुल से बुलवा लिया। उसने राजकुमार को विस्तार से बताया कि कैसे मरालभूपति अन्य राजाओं को अपने साथ मिला कर कौंडिन्य पर आक्रमण करने का षड्यंत्र रच रहा है। इसमें उनका रिश्तेदार कालिंदी नरेश माधव भी शामिल है। तभी अचानक माधवसेन की बेटी श्रीलेखा पुरुष बेशमें गुप्त रूप से कौंडिन्य पहुँच गई। श्रीदत्त ने बिजयदत्त के साथ उसका तत्काल गन्धर्व विवाह करा दिया। राजगुरु के आदेश पर पूर्वी दिशा के मैदान में खुदाई आरम्भ कर दी गई। गड्ढे में गर्म उच्छ्वास छोड़ता हुआ एक विशाल सर्प दिखाई पड़ा। राजगुरु ने विजय दत्त को सावधान करते हुए बताया कि पहले मंत्र से वे सर्प को शांत करने का प्रयास करेंगे। लेकिन यदि यह संभव नहीं हुआ तो सर्प का सामना तुम्हें ही करना होगा।....**इसके उपरान्त**]*

शिबानन्द की बात सुनते ही विजयदत्त का हाथ अनायास म्यान में रखी अपनी तलवार पर चला गया।

इसके बाद शिबानन्द धीरे-धीरे गड्ढे में उतरे और हाथ में जल लेकर ऊँचे स्वर में मंत्र पाठ करने लगे। फिर उन्होंने जल को सर्प के ऊपर छिड़क दिया। श्रीदत्त और बिजयदत्त साँस रोक कर इस भयानक दृश्य को देख रहे थे।

शिवानंद को आशा थी कि मंत्र के प्रभाव से सर्पराज अदृश्य हो जायेंगे। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। हाँ, सर्प ने गर्म सांसें छोड़ना बन्द कर दिया। जब शिबानन्द पुन: मंत्रपाठ करने लगे, तब सर्प ने कहा, -"हे मंत्रवेत्ता, मुझ पर इन मंत्रों का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। मेरी सृष्टि एक महान मांत्रिक द्वारा एक महान उद्देश्य से की गई है। जो व्यक्ति मेरे प्रश्न का सही उत्तर देगा, मैं सिर्फ उसी के वश में रहूँगा।"

सर्प की बातें सुनकर श्रीदत्त एवं विजयदत्त ने चकित होकर एक-दूसरे को देखा। शिबानन्द ने गड्ढे से बाहर आकर विजयदत्त को सम्बोधित करते हुए कहा, - "पुत्र! अब सर्पराज का सामना

तुम्हें करना है। निर्भय होकर आगे बढ़ो और सर्प के प्रश्न का उत्तर दो।"

विजयदत्त ने पिता और गुरु का आशीर्वाद लेकर और शांत तथा एकाग्र चित होकर गड्ढे में प्रवेश किया। फिर सर्पराज को प्रणाम कर कहा, - "हे सर्पराज, मैं आप के प्रश्न का उत्तर देने को तैयार हूँ। आप प्रश्न करें।"

सर्प ने विजयदत्त को चेतावनी देते हुए कहा, - "हे वीर युवक! मेरी बात को पहले ध्यान से सुनो। जो मेरे प्रश्न का सही उत्तर देगा, मैं एक दिव्य माला बन कर हर समय उसके कण्ठ में विराजमान रहूँगा। और जो सही उत्तर नहीं देगा उसे डँस कर यमलोक भेज दूँगा। धर्मनीति के अनुसार प्रश्न पूछने से पूर्व मैं तुम्हें चेतावनी दे रहा हूँ। फिर भी यदि तुम मेरे प्रश्न का उत्तर देना चाहते हो तो प्रश्न करूँगा। अन्यथा जा सकते हो।"

सर्प की बातों से श्रीदत्त घबरा गया और विजयदत्त को मना करने के लिए गड्ढे की ओर बढ़ने लगा। शिवानन्द ने उसे रोकते हुए कहा, - "आप भयभीत न हों और युवराज की योग्यता पर विश्वास रखें।"

विजयदत्त भी क्षण भर के लिए विचलित हो गया। किन्तु तुरन्त उसने पूरे आत्म बल के साथ कहा, - "आप का धर्म सूत्र मुझे स्वीकार है। आप प्रश्न करें।"

"तो बताओ कि एक श्रेष्ठ राजा के लिए पालन करने योग्य तीन धर्म कौन से हैं?" सर्प ने पूछा।

विजयदत्त ने क्षण भर सोच कर उत्तर दिया, - "एक श्रेष्ठ राजा को तीनों कालों में त्रिकरण शुद्धि के साथ जिन तीन धर्मों का पालन करना चाहिए, वे हैं - सत्य, धर्म और न्याय।"

"साधुवाद राजकुमार!" सर्प ने प्रसन्न होकर कहा, -"तुमने मुझ पर विजय प्राप्त कर ली! इसी क्षण मैं पुष्पमाला बन कर तुम्हारे कंठ की शोभा बढ़ाऊँगा। और जब तक मैं तुम्हारे साथ रहूँगा, प्रभावशाली विष भी तुम्हारे लिए अमृत बन जायेगा।

"और भी सुनो, यहाँ से तीन फुट और गहरा खुदवाओगे तो तुम्हें एक विलक्षण दिव्य उपहार मिलेगा। विजयी भव।" इस प्रकार आशार्वाद देकर सर्प अचानक सीधा खड़ा हो गया और धवल मोतियों को बिखेरता हुआ एक पुष्पमाला में परिवर्तित हो गया। माला स्वत: विजयदत्त के गले में जा गिरी।

खुदाई का काम पुन: आरम्भ हुआ और सन्ध्या

तक तीन फुट की गहराई पर पहुँचते ही श्रमिकों को किसी धातु की खनक सुनाई पड़ी। श्रमिक बड़ी सावधानी और सतर्कता के साथ उसके आस-पास की मिट्टी निकालने लगे। विजयदत्त ने गहराई में उतर कर बड़ी सूक्ष्मता से भूगर्भ से निकलने वाले धातु की जाँच की। लेकिन तब तक अंधेरा फैलने लगा था। गुरु शिवानन्द के आदेशानुसार मशाल की रोशनी में रात भर काम होता रहा।

प्रातःकालीन बाल-सूर्य की सुनहली रश्मियों में जो कुछ उन सब ने सुखद आश्चर्य से देखा वह था एक चक्रवर्ती सम्राट की प्रतिष्ठा, शक्ति और वैभव का प्रतीक एक विशाल स्वर्ण-सिंहासन।

उस अपूर्व और अद्भुत सिंहासन के शीर्ष भाग पर हैहय वंश की कुल देवी गायत्री की प्रतिमा सजी थी। देवी के चरणों के नीचे एक बृहत आकार का एक पद्म उत्कीर्ण था। पद्म के केन्द्र में एक माणिक्य जड़ा हुआ था। देवी के मुकुट के मध्य में जटित हीरक रत्न से धवल किरणें बिखर रही थीं। सिंहासन के दोनों ओर दो सिंहों की आकृतियाँ थीं। उनके मुख बन्द थे। किन्तु रजोगुण की संपूर्ण शक्ति को जीवन्त रूप में दर्शाने वाली अग्निपिंडों के समान उनकी आँखों को देखने से दर्शकों के हृदय दहल जाते थे।

उस अद्वितीय सिंहासन पर आसीन होने के लिए उसमें तीन सोपान बने थे। प्रत्येक सोपान पर दोनों ओर स्वर्ण की दो नारी-प्रतिमाएँ स्वागत की मुद्रा में प्रणत थीं। इन प्रतिमाओं की कमनीयता और इनके शिल्प की सूक्ष्मता दोनों ही विशेष रूप से दर्शनीय थीं।

सिंहासन के सौन्दर्य की मन ही मन प्रशंसा करते हुए महाराज श्रीदत्त ने कुल देवी की प्रतिमा को हाथ जोड़ कर प्रणाम किया और कहा, - "माँ, हम सब आप की संतान हैं। आशीर्वाद दीजिए कि आप के कुल के दीपक और भावी सम्राट बिजयदत्त का राज्याभिषेक इसी राजसिंहासन पर हो और आप की कृपा कवच बन कर हर समय इसके साथ रहे।"

बिजयदत्त और श्रीलेखा ने भी कुलदेवी को नत मस्तक होकर प्रणाम किया। फिर महाराज श्रीदत्त अधिकारियों को स्वर्ण-सिंहासन को राजभवन में सावधानी से पहुँचाने का आदेश देकर सबके साथ स्वयं भी वहाँ चले गये।

राजभवन में शिनीमुख नाम का गुप्त चर महाराज की प्रतीक्षा कर रहा था। उसने महाराज को शत्रुओं

की गतिविधि की नवीनतम सूचना देते हुए बताया कि मराल भूपति थोड़ी-सी सेना के साथ कालिन्दी राज्य के अतिथि-भवन में वहाँ की राजकुमारी के साथ अपने बेटे चक्रभूपति के विवाह के लिए ठहरा हुआ है। अचानक उन दोनों को मालूम हुआ कि राजकुमारी श्रीलेखा पुरुष वेश वहाँ से भाग गई है। उन्हें विश्वास है कि वह हमारे राज्य में आई है। कालिन्दी के राजा को भी यही सन्देह है।

मराल भूपति ने कालिन्दी नरेश को यह सन्देश भेजा था कि जो हो गया सो हो गया, लेकिन युद्ध की योजना में कोई परिवर्तन नहीं होगा और पूर्व नियोजित रणनीति के अनुसार कौंडिन्य पर आक्रमण किया जायेगा। कालिन्दी नरेश ने इस पर अपनी सहमति दे दी है।

चम्पक और कुन्द देशों की सेनाएँ अब तक आक्रमण के लिए हमारे देश की ओर चल पड़ी होंगी। कालिन्दी की सेना मराल की थोड़ी-सी सेना के साथ ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी की रात को निकलेगी और कालिन्दी नदी के किनारे पड़ाव डालेगी और उसी रात हमारे देश पर आक्रमण कर देगी।

गुप्तचर की बातों को सुनकर श्रीदत्त ने पुत्र की ओर देखा और कहा, -"विजय, लगता है अभी भी तुम्हारे ससुर हमारे शत्रुओं के पक्ष में मिले हुए हैं और कबूतर द्वारा भेजा गया सन्देश शायद हमलोगों को गुमराह करने के लिए था।

विजयदत्त यह सुनकर कुछ सोचने लगा। फिर बोला, -"ऐसा भी हो सकता है कि शत्रुओं के बीच घिर जाने के कारण वे उनका साथ देने का नाटक कर रहे हों।"

बेटे की समझ की मन ही मन प्रशंसा करते हुए श्रीदत्त ने कहा, - "हाँ, इसकी भी संभावना है। युद्ध की नीति के अनुसार संकट में शत्रु के साथ मित्र की तरह बरतना राजनीति की एक चाल है। यदि वह शत्रु पक्ष में होता तो कबूतर से एक और सन्देश भेजता। जो भी हो, हमें अपनी सेना को युद्ध के लिए तैयार रखना होगा और जय-पराजय भगवान को सौंप कर हमें युद्ध की ज्वाला में कूद जाना होगा।"

थोड़ी देर रुक कर फिर वे थोड़ी चिन्तित मुद्रा में राजगुरु शिवानन्द से बोले, - "गुरुवर, गुप्तचर के संवाद से आपने स्थिति की गंभीरता भाँप ली होगी। हम शत्रुओं से घिर गये हैं। आक्रमण किसी क्षण हो सकता है। शत्रुओं के सैन्यबल के सामने हमारी शक्ति नगण्य है। थोड़ी देर पहले स्वर्ण-

सिंहासन को देखकर मुझे लगा था कि मेरे पुत्र के समान शायद ही कोई भाग्यशाली होगा जो ऐसे दिव्य सिंहासन पर आसीन होगा। किन्तु अब परिस्थितियाँ अनुकूल नहीं दिखाई दे रही हैं।"

तभी शिनीमुख ने पुनः कहा-"क्षमा करें महाराज, अभी-अभी एक अन्य गुप्तचर से यह पता चला है कि जब माधव सेन ने चक्रभूपति को राजकुमारी श्रीलेखा से विवाह की बात पक्की करने के लिए बुलाया था तो उन्होंने अपनी महारानी से यह बात छिपा रखी थी। महारानी को चक्र भूपति के साथ श्रीलेखा का विवाह बिल्कुल पसन्द नहीं था। लेकिन फिर भी उन्हें यह खबर मिल गई थी। राजकुमारी महारानी की सहायता से ही महल से बाहर जाने में सफल हो सकी थी।

राजकुमारी को लेकर महारानी और महाराज माधव सेन के बीच मतभेद होने के कारण माधव सेन असमंजस में पड़ गये। उन्हें यह समझ में नहीं आया कि चक्रभूपति के सामने क्या मुँह लेकर जायें। जिस राजा ने उसे इतना सम्मान दिया था, उसके सामने कालिन्दी की नाक कट गई। उसके लिए न सिर्फ राज्य की प्रतिष्ठा दाँव पर थी, बल्कि राज्य स्वयं खतरे में था।

जब माधव सेन स्वयं कुछ निर्णय न ले सके तो महारानी की सलाह पर उन्होंने अपनी रणनीति बदल दी। लेकिन यह बात उन्होंने मराल भूपति और चक्रभूपति से गुप्त रखी। उनकी सेना मराल भूपति की सेना के साथ जरूर आयेगी, लेकिन अवसर मिलते ही कौंडिन्य के पक्षमें अपना पैंतरा बदल देगी। यह कालिन्दी के राजमहल का अन्तरंग

संवाद है। फिर भी महाराज को सावधान रहना चाहिए।

श्रीदत्त ने यह संवाद सुन कर मुस्कुराते हुए विजय से कहा, -"तुम्हारा अन्तर्बोध सच निकला विजय। परमप्रभु और कुलदेवी की सचमुच हम पर असीम अनुकंपा है। इस घोर संकट के अंधकार में आशा की किरण स्पष्ट दिखाई दे रही है।"

महाराज की आशंका को दूर करते हुए राजगुरु शिवानन्द ने भी उन्हें कहा, - "मैं स्वयं भी आप को यह बताना चाह रहा था कि ज्योतिष की गणना के अनुसार युवराज के लिए संकट की घड़ी निकल गई। कल तक उसके प्राण खतरे में थे। लेकिन अब उसके ग्रह इतने प्रबल हैं कि शत्रु इसके प्राण लेना तो दूर, उन्हें अपनी जान के लाले पड़ जायेंगे। इसलिए उसका राज्याभिषेक अब शीघ्रातिशीघ्र हो
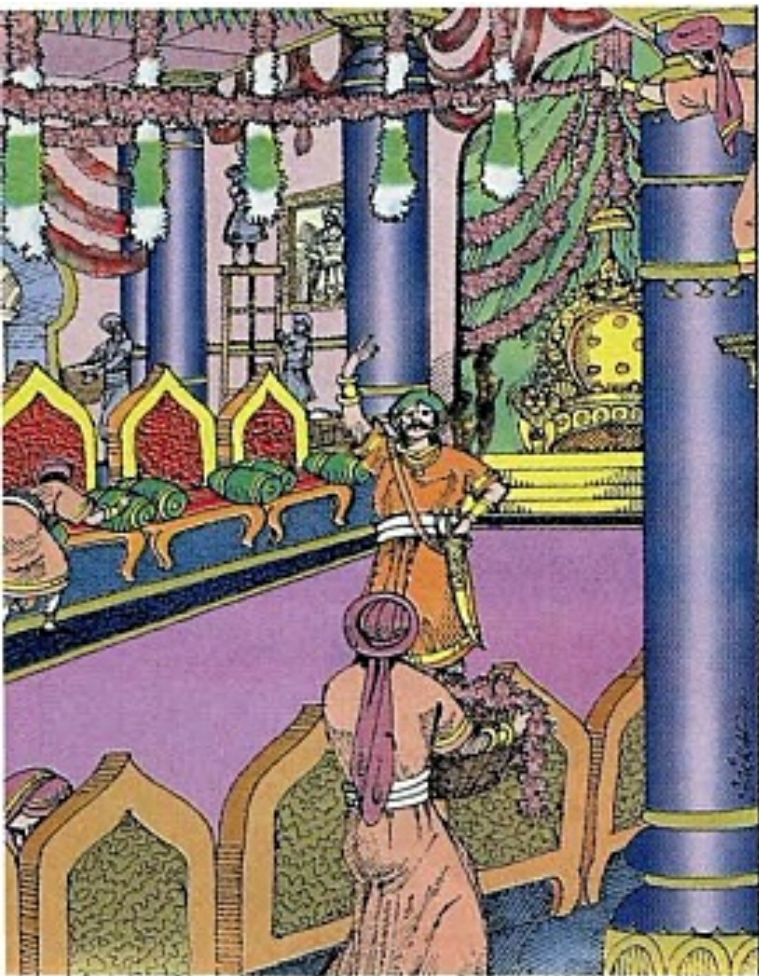
जाना चाहिए और महाराज के रूप में सेना का नेतृत्व उसे ही संभालना चाहिए। विजयश्री निश्चय ही उसके चरण चूमेगी।"

शिवानन्द की बातें सुन कर दोनों कुछ देर मौन हो गये।

विजयदत्त को मौन देख कर महाराज ने समझा कि विजयदत्त गुरुदेव की बातों से सहमत है। उसने पुनः हाथ जोड़ कर देवी को प्रणाम करते हुए गुरुदेवसे कहा- "यह सब कुलदेवी गायत्री देवी की कृपा है। इधर कुछ दिनों से होनेवाली घटनाएँ देवी की प्रेरणा से ही हो रही हैं। मानव-प्रयास से नहीं। आप की बातों से अब मुझे विश्वास हो गया है कि मेरे पुत्र पर कुलदेवी की असीम कृपा है। आप जैसा चाहते हैं, वैसा ही कीजिए गुरुवर।"

महाराज की बातों पर हर्ष प्रकट करते हुए शिवानन्द ने कहा, - "साधुवाद महाराज! आप धन्य हैं जो ऐसे भाग्यशाली पुत्र के पिता हैं। मैंने युवराज के सिंहासनारुढ़ होने का मुहूर्त्त भी निकाल लिया है। आज से ठीक चार दिनों के पश्चात ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी शुक्रवार के दिन प्रातःकाल सूर्योदय के दो पलों के बाद उस अनुपम घड़ी में इसके राज्याभिषेक की व्यवस्था कीजिए।"

"शत्रुदल उसी मुहूर्त्त पर आक्रमण के लिए सेनाएँ कूच करेगा और इधर उसी समय राज्याभिषेक सम्पन्न होगा।" विजयदत्त के मुख से अनायास ही ये शब्द निकल गये।

महाराज ने उस मुहूर्त्त के लिए स्वीकृति दे दी। सबकी यही राय थी कि राज्याभिषेक का उत्सव सरल, संक्षिप्त और आडम्बर रहित होगा।

राज्याभिषेक और युद्ध की तैयारियाँ एक साथ होने लगीं। स्वर्णकार सिंहासन हो चमकाने लगे और सैनिक अपनी तलवारों पर शान चढ़ाने तथा युद्ध का अभ्यास करने लगे।

ऐसा लगा मानों चार दिन चार क्षणों में बीत गये और वह शुभ घड़ी आ गई।

सभा भवन फूल-मालाओं से सुसज्जित हो गया। विविध-प्रकार की मणियों और मोतियों से सिंहासन को और भी कांतिमान बना दिया गया। सिंहासन के सामने निचले भाग में राजकर्मचारियों के लिए आसनों की व्यवस्था कर दी गई। उसके पीछे खड़े होकर आम प्रजा राज्याभिषेक के उत्सव को देख सकती थी।

सिंहासन के पार्श्व में वेदज्ञ पंडित ऊँचे स्वर में

वेद-मंत्रों का पाठ करने लगे। सभी राज्याभिषेक के लिए निर्धारित शुभ मुहूर्त्त की प्रतीक्षा कर रहे थे। तभी शिवानन्द का संकेत पाकर विजयदत्त और श्रीलेखा ने गुरु और पिताश्री के चरणों का स्पर्श किया और सिंहासन के प्रथम सोपान पर अपने पाँव रखे ही थे कि वर्षा ऋतु के मेघ गर्जन के समान गंभीर पर मधुर स्वर में एक घोषणा सुनाई पड़ी - "विजयदत्त, ठहर जाओ।"

इस गंभीर आवाज ने सब को चौंका दिया।

सब सांस रोक कर अगले घटनाक्रम की प्रतीक्षा करने लगे। महाराज श्री दत्त का मन सशंकित हो उठा। उन्होंने मन ही मन कुलदेवी का ध्यान किया और अज्ञानवश उनके प्रति हुए अपराध के लिए क्षमा मांगी। वे इस बात को समझने वाले वहाँ एक मात्र व्यक्ति थे कि वहाँ की सारी घटनाएँ किसी अदृश्य और जीवन्त शक्ति के द्वारा संचालित हो रही हैं और वे स्वयं निष्प्राण कठपुतली के समान किसी के इशारे पर नाच रहे हैं। लेकिन उस शक्ति के साथ सम्पर्क स्थापित करके उसके संकल्प को जान पाने में वे स्वयं असमर्थ थे।

लेकिन उनके गुरु शिवानंद एक उच्च कोटि के सिद्ध मंत्रवेत्ता होने के नाते गुह्य जगत की शक्तियों से न केवल परिचित थे, बल्कि उनकी कार्यप्रणाली में दखल देने की शक्ति भी रखते थे। महाराज का उन पर पूरा विश्वास और भरोसा था। स्वर्ण सिंहासन जैसी दिव्य वस्तु जिसका संरक्षण गुह्य शक्तियाँ स्वयं कर रही हैं, गुरु शिवानन्द की कृपा से ही उपलब्ध हुई थी। सारा कार्य उन्हीं के निर्देशन में हो रहा था। फिर क्या कारण है कि यह बाधा...... यह सोच कर उनका शंकाकुल हृदय दहल उठा। उन्होंने प्रश्न भरी दृष्टि शिवानन्द पर डाली मानों पूछ रहे हों कि क्या कोई अपराध हो गया हम सब से।

विजयदत्त और श्रीलेखा के पाँव स्वतः यंत्रवत पीछे हट गये। उन दोनों ने भी राजगुरु को देखते हुए जैसे पूछा, -"हम अब क्या करें, गुरुदेव।"

एक महान सभ्यता की झाँकियाँ :
युग-युग में सत्य के लिए इसकी गौरवमयी खोज

गंगा-अवतरण

"क्या यह सच है?" संदीप और चमेली की माँ जयश्री ने विस्मयपूर्वक कहा। उसके विस्मय में कुछ उल्लास का भाव था।

"यह सच है, माँ, किन्तु ईमानदारी से कहा जाये तो इस निबंध प्रतियोगिता में मैं नहीं, बल्कि ग्रैंड पा प्रथम आये हैं," संदीप ने कहा। "तीन विषय दिये गये थे:

भारतीय इतिहास का तुम्हारा सर्वप्रिय पात्र, भारतीय पुराणशास्त्र का तुम्हारा सर्वप्रिय पात्र तथा तुम्हारा सर्वप्रिय परिचित व्यक्ति। मैंने द्वितीय विषय चुना और नचिकेता के विषय में लिखा। निर्णायकों को सबसे अधिक कहानी की व्याख्या पसन्द आई। जब ऋषि ने नचिकेता को कहा कि यम के पास जाओ तब उन्होंने शाप नहीं दिया, बल्कि अपने प्रतिभाशाली पुत्र को मृत्यु के रहस्य पर ध्यान केन्द्रित करने के लिए कहा। नचिकेता का यम के निवास पर तीन दिन और तीन रात प्रतीक्षा करने का अर्थ था - कि नचिकेता ने मृत्यु के रहस्य पर तीन दिन और तीन रात अपने ध्यान में विचार किया। मैंने कहानी की व्याख्या इस प्रकार की।"

"अच्छा तो यह बात है संदीप, मुझे नहीं मालूम था कि नचिकेता की कहानी का अर्थ यह है," जयश्री ने कहा।

"यदि गहरे ज्ञान को कहानियों के रूप में प्रस्तुत नहीं किया जाता तो लोग इसे भूल जाते। साथ ही, यदि ऐसी कहानियाँ सैकड़ों, बल्कि हजारों वर्षों से सुनी जाती रहीं तो इसलिए कि उनमें गहरा ज्ञान छिपा है।" अपने कमरे से बाहर आते हुए ग्रैंड पा देवनाथ ने अपना विचार प्रकट किया।

गाथा

"ग्रैंड पा! क्या आप घूमने जा रहे हैं? मैं आप का साथ दूँगा," संदीप ने उत्साहपूर्वक कहा।

"मैं भी।" खुशी से झूमती और ड्राईंग रूम में आती हुई चमेली बोली।

तीनों नदी के किनारे चल रहे थे।

"हमलोग जिस नदी के किनारे रहते हैं, वह गंगा की एक शाखा है। गंगा को इतना पवित्र क्यों माना जाता है?" प्रो. देवनाथ ने पूछा।

चमेली ने झट कहा, "मैं जानती हूँ। क्योंकि गंगा ऋषिकेश, हरिद्वार, वाराणसी और कई पवित्र स्थानों से होकर बहती है।"

"धत् तेरे की! चमेली, इसके ठीक विपरीत हो सकता है। ये नगर इसलिए पवित्र हैं क्यों कि पवित्र गंगा के किनारे बसे हुए हैं।" संदीप ने उत्तर दिया।

"ज्यादा स्मार्ट बनने की कोशिश न करो।" चमेली ने डाँटा।

"मुझे कोशिश करने की आवश्यकता नहीं है। मैं स्मार्ट हूँ। मेरा मतलब है कि तुमसे अधिक स्मार्ट हूँ।" संदीप ने कहा।

"यह सब छोड़ो मेरे बच्चो! वास्तव में तुम दोनों स्मार्ट हो, मुझसे अधिक स्मार्ट," प्रोफेसर ने कहा। "अपने किनारों पर बसे पवित्र स्थानों के कारण गंगा पवित्र नहीं है। और न वे स्थान सिर्फ एक महान नदी के किनारे पर बसे होने के कारण पवित्र हैं। दोनों के पवित्र होने के अलग-अलग कारण हैं। पहले गंगा के पवित्र होने के कारण बताओ।"

"कृपया आप बतायें।" चमेली ने कहा।

"चमेली, क्या मैंने यह नहीं कहा कि मैं इसके विषय में जानना चाहता हूँ। अब इसका उत्तर तुम सब को देना है।" ग्रैंड पा ने याद दिलाया।

"लेकिन हमें नहीं मालूम," संदीप ने कहा। "पता लगाने का प्रयास करो। जितना जान सको, हमें कल बताओ," ग्रैंड पा ने कहा।

फिर भी, ग्रैंड पा ने बच्चों को निराश नहीं किया, क्यों कि कुछ रोचक और ज्ञानवर्धक बातें सुनने के लिए ही वे इनके साथ बाहर आये थे। उन्होंने संसार की दो सबसे लम्बी नदियों के बारे में बताया-

क्रमशः

नील नदी और आमेजन नदी और यह भी कि कैसे आमेजन नदी के उद्‌गम की खोज सन् 1971 में अमरीकी अन्वेषक लॉरेन मेल्लटायर ने की।

"अपनी महानतम नदियों के विषय में ये लोग इतने दिनों तक अनभिज्ञ कैसे रहे?" चमेली को आश्‍चर्य हुआ।

"हमलोग बहुत चीजों के विषय में नहीं जानते। समस्या यह है कि मनुष्य अहंकार वश यह स्वीकार नहीं कर पाता। मनुष्य के आने से बहुत पहले से प्रकृति मौजूद थी। उसने अपना सामंजस्य स्थापित कर लिया था। मनुष्य ने परिणामों पर बिना विचार किये पर्वतों को नष्ट कर दिया और नदियों की धाराओं के साथ खिलवाड़ किया। लेकिन हमारे पूर्वजों ने पर्वतों और नदियों को देव-देवियों के रूप में देखा। ऋषियों का विश्‍वास था कि इन प्राकृतिक गोचर वस्तुओं के पीछे अगोचर किन्तु सचेतन सत्ताएँ विद्यमान हैं। जन साधारण के इस विश्‍वास में कि ये देव-देवियाँ हैं, एक बहुत बड़ा प्रयोजन छिपा था। लोग पर्वतों और नदियों को आदर की भावना से देखते थे।" ग्रैंड पा ने कहा।

"लेकिन उनका दृष्टिकोण कैसे बदल गया?" संदीप ने जानना चाहा।

"मनुष्य धीरे-धीरे अधिक उपयोगितावादी होता चला गया। तात्कालिक या तुरन्त मिलनेवाला लाभ ही उसके लिए महत्वपूर्ण था। उसके अहं को तुष्ट करने वाली हर चीज़ अर्थपूर्ण थी। मनुष्यमें आज अपने अतीत के प्रति अवहेलना या तिरस्कार का भाव है और भावी पीढ़ियों के प्रति वह लापरवाह है। वह पर्यावरण को प्रदूषित बना रहा है, पुराने सुन्दर वनों को तेजी से नष्ट कर रहा है और नदियों तथा अन्य प्राकृतिक संसाधनों का शोषण कर रहा है।" ग्रैंड पा ने समझाते हुए कहा।

तीनों घर वापस आ गये। संदीप और चमेली गंभीर मुद्रा में थे। प्रकृति के प्रति मनुष्य के अप्राकृतिक आचरण के ग्रैंड पा द्वारा प्रस्तुत किये गये निराशाजनक चित्रण से वे चिन्तित हो गये थे।

"लेकिन, मेरे बच्चो! मुझे आशा है कि तुम्हारी पीढ़ी तुम्हारे पिता की और मेरी पीढ़ी से अधिक प्रज्ञावान होगी। लेकिन एक भव्य भविष्य के निर्माण के लिए तुम्हें अतीत को अवश्य जानना चाहिए। आशा है, कल तुम मुझे गंगा के बारे में बताओगे।"

दूसरे दिन शाम को संदीप और चमेली दोनों ग्रैंड पा के अध्ययन कक्ष में उनसे मिलते समय बहुत प्रसन्न थे। दोनों ने किसी प्रकार गंगा की कहानी मालूम कर ली थी-संदीप ने एक पुस्तक से और चमेली ने अपने एक अध्यापक से। दोनों ने मिल कर कहानी सुनाई।

बहुत प्राचीन काल में एक समय सगर नाम

का एक राजा था। उसने अश्वमेध यज्ञ करने का निश्चय किया। इसके लिए सभी राज्यों में एक अश्व छोड़ा जाता था। यदि पृथ्वी के सभी राज्यों से किसी की आपत्ति के बिना अश्व लौट कर वापस आ जाता तो राजा अपने को सार्वभौम सम्राट घोषित कर देता था।

किन्तु, एक दिन अश्व रहस्यमय ढंग से गायब हो गया। बहुत खोजने के बाद भी उसका पता न चला। जब पृथ्वी पर कहीं नहीं मिला तब राजा ने अपने सौ पुत्रों को उसे ढूंढने केलिए पाताल में भेजा। पाताल लोक में वह अश्व एक स्तंभ से बंधा हुआ था। निकट में एक ऋषि तपस्या में लीन थे।

सगर के पुत्रों ने ऋषि पर अश्व की चोरी का आरोप लगाया। ऋषि ने क्रोधित होकर उन्हें अपने शाप से जला कर भस्म कर दिया।

यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि ऋषि निर्दोष थे और इन्द्र ने सगर के साथ मज़ाक किया था।

ऋषि का नाम कपिल था जिनमें महान अलौकिक शक्तियाँ थीं। शाप से मुक्त होने के लिए राजा सगर कुछ न कर सके और न ही उसका उत्तराधिकारी और पोता अंशुमान और न अंशुमान का पुत्र राजा दिलीप ही कुछ करने में समर्थ था।

दिलीप के पुत्र भगीरथ ने इस शाप से अपने पूर्वजों को मुक्त करने का निश्चय किया। उन्होंने बहुत समय तक तपस्या की और फिर कपिल ऋषि से अपने पूर्वजों को पुनर्जीवित कर देने की प्रार्थना की।

कपिल ऋषि युवराज भगीरथ से प्रसन्न हुए किन्तु भस्मों के ढेर से चौसठ हजार राजकुमारों को पुनर्जीवन देना आसान काम नहीं था। इस

असंभव को संभव बनाने का एक ही मार्ग था - स्वर्ग की पवित्र नदी गंगा को पृथ्वी पर लाना और भस्मों पर उसकी धारा को प्रवाहित करना।

गंगा तब ब्रह्मा के कमंडल में थी। हिमालय पर्वत पर ध्यान में बैठ कर भगीरथ ने ब्रह्मा का आह्वान किया और उनसे गंगा को पृथ्वी पर प्रवाहित करने की प्रार्थना की। ब्रह्मा ने दया से द्रवित होकर उसकी प्रार्थना स्वीकार कर ली। किन्तु उस स्वर्गीय प्रवाह का संघात क्या पृथ्वी सह सकती है; एक नई कठिनाई आ गई।

भगीरथ की प्रार्थना पर, तब, शिव ने पृथ्वी पर खड़े होकर गंगा के शक्तिशाली प्रपात के प्रघात को अपनी जटा में आत्मसात करना स्वीकार कर लिया। गंगा सबसे पहले उनके सिर पर उतरी, फिर पर्वत श्रेणियों की शिलाओं से होती हुई समतल की ओर प्रवाहित होने लगी।

राजकुमार भगीरथ ने शंख बजा कर गंगा की एक धारा को पाताल लोक की ओर निर्देशित किया। उसके पूर्वजों के भस्मों पर स्वर्ग का पवित्र प्रवाह तरंगित होने लगा और वे तत्क्षण पुनर्जीवित हो उठे।

संदीप और चमेली दोनों ने कहानी का उपसंहार बताते हुए कहा, - "गंगा इसलिए पवित्र है कि यह स्वर्ग की नदी है और कि इसने सगर के पुत्रों को पुन: जीवन प्रदान किया।"

"कहानी को प्रस्तुत करने की प्रभावशाली विधि के लिए बधाई देता हूँ। गंगा अवतरण का एक और आख्यान है जो उतना प्रचलित नहीं है और जो हमें पृथ्वी पर अवतरण से पूर्व गंगा के मूल उद्‌गम के विषय में बताता है। लेकिन तब तक यह भी ध्यान में रखो कि ये आख्यान प्रतीकात्मक है। गंगा के स्पर्श से मृतकों के पुनर्जीवित होने का अर्थ है कि मृत्यु के अभिशाप को स्वर्ग की कृपा मिटा देती है।" ग्रैंड पा देवनाथ ने कहा।

"गंगा के उद्‌गम के विषय में आख्यान क्या है, ग्रैंड पा?" चमेली ने कुछ और जानने के लिए पूछा।

"फिर कभी, मेरे प्यारी बच्ची।" प्रोफेसर ने कहा।

अच्छाई का फल

वीर भद्र के माता-पिता उसके बचपन में ही चल बसे। इसलिए उसके नाना राघव ने उसे अपने घर पर लाकर पाला-पोसा। माँ-बाप के प्यार से वंचित हो जाने के कारण नाना से उसे कुछ ज्यादा ही लाड़-प्यार मिला। नाना उसकी हर जिद पूरी करते और माँ की तरह उसकी देख भाल करते। थोड़ा बड़ा हो जाने पर भी कभी उससे कोई काम करने के लिए नहीं कहा। परिणाम स्वरूप वह मनमौजी और आलसी हो गया। पढ़ने-लिखने में भी उसने रुचि नहीं ली। इसलिए वह अशिक्षित रह गया।

राघव अपनी आधा एकड़ जमीन में भिन्न-भिन्न प्रकार की सब्जियाँ उगाता था। उनकी आमदनी से दोनों आराम से खा-पी रहे थे। राघव अकेला ही खेत पर दिन भर काम करता रहता। वीर भद्रने बड़ा हो जाने पर भी नाना की कभी सहायता नहीं की।

उम्र ढलने के कारण और बुढ़ापे में अधिक परिश्रम करने के कारण राघव का स्वास्थ्य गिरने लगा। अब वह पहले की तरह मेहनत नहीं कर पा रहा था। इसलिए धीरे-धीरे उसकी आमदनी कम होती चली गई और अन्त में घर में खाने के लिए कुछ नहीं रहा।

वीर भद्र खेत पर परिश्रम करने के स्थान पर दूसरों से उधार लेने लगा। राघव की अच्छाई के कारण शुरू-शुरू में उसे गाँव के सभी लोग उधार दे देते थे। बाद में उसे आलसी समझ कर मदद करना बन्द कर दिया।

आमदनी का कोई और साधन न देख कर वीर भद्र अब अपने समवयस्कों से डरा-धमका कर बलपूर्वक पैसे वसूलने लगा। बचपन में पौष्टिक आहार पर्याप्त मिलने के कारण उसका शरीर हट्टा-कट्टा था और दो-चार लोगों से अकेला निपट सकता था। इसलिए गाँव के युवक, उससे डर कर, जो वह माँगता था दे देते थे। जो नहीं देता, उसकी वह पिटाई कर देता था।

गाँव में अकारण आवारा की तरह घूमते रहना और लोगों को डरा-धमका कर पैसे ऐंठना ही उसका काम था। भूख लगने पर कहीं खा लेता और रात को मन्दिर या सराय में सो जाता। उसने नाना के घर में जाना बन्द कर दिया।

नारायण दत्त

धीरे-धीरे वीरभद्र की आदतें और बिगड़ती गईं। अब वह पड़ोसी गाँव के साप्ताहिक हाट में जाकर दुकानदारों से भी पैसे वसूलने लगा। जो नहीं देता था, उस पर गरजने लगता और जो मन में आता वही बोल देता और उसके साथ मार-पीट भी करने लग जाता। गाँव के कुछ बेकार युवक इसके नये दोस्त बन गये और इसके काम में हाथ बँटाने लग गये। इसलिए लोग इससे डरते थे और चुपचाप इसे पैसे दे देते थे। इसका शेरू हर वक्त छाया की तरह साथ रहकर इसकी रखवाली करता। इसकी आमदनी धीरे-धीरे बहुत बढ़ गई। नाना को वह लगभग भूल गया।

एक दिन जब किसी से उसे मालूम हुआ कि उसके नाना बहुत बीमार हैं तो वह उन्हें देखने गया। राघव ने उसे गले से लगाते हुए कहा, - "मेरा अब कोई भरोसा नहीं बेटा, कब प्राण - पखेरू उड़ जाये। मुझे तुम्हारी चिंता लगी रहती है। कुछ काम-धाम शुरू कर। इस तरह जिन्दगी कैसे गुजारोगे। अपना खेत ही संभाल ले। सारी जिन्दगी आराम से कट जायेगी।"

"मेरी चिंता न करो, नाना। मेरे पास जिन्दगी काटने के लिए अब पर्याप्त धन है।" बीरभद्र ने हँसते हुए कहा।

राघव को बीरभद्र की सभी हरकतें मालूम थीं। इसलिए उन्होंने समझाते हुए कहा, - "अनुचित ढंग से कमाया हुआ धन कभी भी समय पर काम नहीं देता। धन वास्तवमें मनुष्य की असली कमाई नहीं है, पगले। असली कमाई है अच्छाई। अच्छाई से जो धन मिल जाये वही सच्चा धन है। विपत्ति में फँसे व्यक्ति को ये ही दो चीजें बचाती हैं - अच्छाई और अच्छाई से अर्जित धन। तुम्हारे पास जो धन

नाना राघव को उसकी हरकतों से बहुत दुख हुआ। उसने अनुभव किया कि शायद उसी के अधिक लाड़-प्यार ने उसे गुमराह कर दिया है।

एक रात एक युवक सराय में वीर भद्र को पीटने आया। वीर भद्र वहीं सो रहा था। युवक को देख कर वहाँ लेटा हुआ एक कुत्ता भौंकने लगा जिससे बीरभद्र की नीदं खुल गई। उसने युवक को पहचान लिया। बीरभद्र ने उसे एक दिन पहले पीटा था और उसी का बदला लेने के लिए वह आया था। दोनों के झगड़े से सराय के अन्य लोग जाग गये और दोनों को अलग कर दिया।

उस दिन से सराय का कुत्ता वीरभद्र का जिगरी दोस्त हो गया और हर समय उसी के साथ रहने लगा। बीरभद्र उसे बहुत प्यार करने लग गया और उसे खूब खाना देने लगा। कुत्ता मोटा होकर शेर जैसा हो गया जिसे वह शेरू कह कर पुकारने लगा।

है वह तुम्हें संकट से बचाने की अपेक्षा संकट में डाल देगा। इसलिए उस पर भरोसा मत करो और इस अन्धकार से निकल कर अच्छाई के प्रकाश में आओ।"

राघव अभी समझा ही रहा था कि बीरभद्र उसकी बातों को अनसुनी करके चला गया। उसकी बातें उसे नीरस और शुष्क लगीं।

एक-दो दिनों के बाद पड़ोसी गाँव के सिंह नाम के एक तगड़े कुत्ते ने शेरू को नोच-नोच कर मार डाला। इस घटना से उसके दिल को बहुत सदमा पहुँचा। उसके शोक में वह कई दिनों तक जार बेजार रोता रहा और कुछ खाया पिया नहीं। उसे लगा जैसे अब कोई उसका रक्षक नहीं रहा। उसे बाहर कहीं जाने की इच्छा नहीं हुई। इसलिए एक मन्दिर के कोने में भूखा-प्यासा पड़ा रहा।

राघव को जब यह मालूम हुआ तो उसे ढूंढ़ता हुआ उसके पास आया और उसे अपने घर ले गया। और खाना खा लेने के लिए मनाते हुए कहा, -"देख बेटे! खाना छोड़ कर शरीर को सताने से कोई लाभ नहीं। खाना खा ले। और अपनी अनुचित हरकतें छोड़ दे। बुराई छोड़ दे। लोगों को सताना छोड़ दे। कितने गरीब लोगों की बद दुआएँ तुम्हें मिल रही हैं! आज तुम्हारा प्यारा शेरू मरा जिस पर तुम्हें इतना भरोसा था। कल तुम्हारे शरीर का भी यही हाल होगा। शारीरिक बल पर भरोसा करना उतनी ही मूर्खता है, जितनी अनुचित धन पर। भरोसा की एक ही चीज़ है - अच्छाई। मैं बार-बार कह रहा हूँ"

अब भी जाग जा। सुबह का भूला शाम को घर लौट आये तो उसे भूला नहीं कहते।"

नाना के कहने पर उसने खाना खा लिया। परन्तु कई दिनों तक घर से नहीं निकला। उसने अब नाना

की बातों पर गंभीरतापूर्वक विचार करना शुरू कर दिया। उनकी बातों में उसे कुछ सचाई नजर आने लगी। वह चुपचाप, मौन और गंभीर बन घर में ही बैठा रहता।

एक दिन उसका पड़ोसी जगत ज्वर-पीड़ित होते हुए भी शाम को खेत पर जा रहा था। उसे रात में वहीं रह कर फसल की निगरानी करनी थी। उसकी पत्नी और बेटी ज्वर के कारण उसे जाने से रोक रही थीं, लेकिन फिर भी वह जाने की ज़िद कर रहा था, क्योंकि उसे डर था कि तैयार फसल कोई काट कर ले जायेगा।

बीरभद्र अपने दरवाजे पर बैठा यह सब देख और सुन रहा था। उसे जगत पर दया आ गई। उसने हृदय से अनुभव किया कि ज्वर की हालत में उसका खेत पर जाना अच्छा नहीं होगा। उसकी अन्तरात्मा से आवाज आई कि तू इसकी मदद कर दे। तुम्हारा ही पड़ोसी तो है।

"जगत चाचा। तुम आराम कर लो। तुम्हारे खेत पर मैं चला जाता हूँ। तुम तो बीमार हो, पर मैं भला चंगा हूँ।" यह कह कर बीर भद्र जगत के खेत पर चला गया।

जगत की बेटी ने रात का खाना एक डिब्बे में डाल कर उसे दे दिया।

वीरभद्र के स्वभाव में इस परिवर्तन को देख कर राघव और जगत दोनों बड़े प्रसन्न हुए।

दूसरे दिन सुबह बहुत देर तक बीरभद्र नहीं लौटा तो राघव घबरा कर दौड़ा-दौड़ा जगत के खेत पर देखने गया। वहाँ खेत के एक कोने में बीरभद्र अधमरा पड़ा हुआ कराह रहा था। राघव अपने नाती को इस हालत में देख कर चीख पड़ा। फिर अन्य लोगों की सहायता से उसे घर पर लाया।

जगत का एक रिश्तेदार उसकी बेटी सुवर्चला से शादी कर उसकी जायदाद हड़पना चाहता था। जगत को यह रिश्ता पसन्द नहीं था। इसलिए रिश्तेदार ने जगत को मार कर उसकी जायदाद को हड़पना चाहा। उसने सोचा कि जगत के मर जाने पर स्त्रियों से जायदाद हड़पना मुश्किल नहीं होगा। उसको मारने के लिए ही रिश्तेदार कुछ लोगों को लेकर खेत पर गया था क्यों कि वह जानता था जगत खेत की रखवाली के लिए वहाँ सोयेगा।

वीरभद्र अभी सोया नहीं था, उसलिए उसने उन आदमियों का मुकाबला किया। जब रिश्तेदार को यह पता चला कि वह जगत नहीं कोई और है तो उसे खूब मार-पीट कर चले गये। जान नहीं ली।

वीरभद्र के इस त्याग ने उसके जीवन को बदल दिया। जगत ने वीरभद्र की चिकित्सा पर बहुत पैसे खर्च किये। सुवर्चला ने रात-दिन उसकी सेवा की। सबके मन में वीरभद्र के लिए घृणा और भय के स्थान पर प्रेम और आदर की भावना जाग्रत हो गई।

जब वीरभद्र पूर्ण स्वस्थ हो गया तो एकदिन राघव ने उससे कहा, "बेटे, जगत अपनी बेटी सुवर्चला से तुम्हारे विवाह का प्रस्ताव लेकर आया था। साथ में सात एकड़ ज़मीन दे रहा है। मैंने तुम्हारी ओर से हाँ कह दिया है। तुम्हें कुछ कहना है?"

"हाँ, नाना जी।" "क्या?" नाना ने घबरा कर पूछा।

"यही कि थोड़ी-सी अच्छाई का फल इतना बड़ा हो सकता है, मुझे नहीं मालूम था। आप ठीक ही कहते थे नाना जी।" नाना ने नाती को गले से लगा लिया।

वीरभद्र की आँखों से झर-झर आँसू बह रहे थे। उसने सुबकते हुए कहा, - "यदि सुबह का भूला शाम को घर लौट आये तो उसे भूला तो नहीं कहते न, नाना जी?"

मंदिर और दंतकथाएं

सेलम के दक्षिण-पश्चिम में एक कस्बा है – भवानी. भवानी नदी पर से इसका नाम पड़ा है. यह नदी केरल की वळ्ळुवनाडु पहाड़ियों से निकलती है और तमिलनाडु में कोयम्बत्तूर और ईरोड जिलों में 217 कि.मी. बहती है. इस नदी में सिरुवाणी, चित्तर, कुन्नूर, कुंदा और मोयार जैसी कई छोटी नदियां मिलती हैं.

भवानी और कावेरी नदियों का संगम बड़ा पवित्र तीर्थस्थान है. यह विश्वास प्रचलित है कि भवानी और कावेरी के संगम पर अमुदा नामक एक अदृश्य भूगर्भीय नदी भी आकर उनसे मिलती है. स्थानीय पुराण के अनुसार, महर्षि पराशर ने विष्णु से अमृतकलश लेकर भवानी नदी में गाड़ दिया था, ताकि उसे असुरों से बचाया जा सके, जो उसे हथियाना चाहते थे. कुछ समय बाद जब पराशर लौटे तो उन्होंने देखा कि अमृतघट शिवलिंग में बदल गया है. पराशर ने उसे उठाने का बहुत प्रयत्न किया, फिर भी वे उसे उठा नहीं सके. इस प्रयत्न में लिंग में से पानी की धारा फूट पड़ी, जो संगम पर अमुदा नदी के नाम से प्रसिद्ध हुई.

भवानी का संगमेश्वर मंदिर तमिलनाडु में शैवों का प्रसिद्ध पवित्र स्थान है. यह स्थान *दक्षिण प्रयाग*, *दक्षिण बदरी* और *त्रिवेणी संगम* नामों से भी मशहूर है. इसकी चार दिशाओं में शंखगिरि, तिरुच्चेनगोडु, पद्मगिरि और वेदगिरि के मंदिर हैं.

सन 1900 के आरंभिक महीनों में मंदिर की

भवानी का संगमेश्वर मंदिर

महर्षि पराशर ने शिवलिंग उठाने का प्रयत्न किया.

दीवार में एक दरवाजा बनाया गया था, ताकि अंग्रेज कलेक्टर एडमंड गैरो बाहर से भगवान के दर्शन कर सके. यह गोरा अफसर संगम के पास ही रहता था. एक बार संगम में अचानक बाढ़ आ गयी, उसमें उसका बंगला और उसके पास स्थित पुराना किला जलमग्न हो गये. पर उस बाढ़ से यह गोरा दैवयोग से बच गया, क्योंकि बाढ़ आने से ठीक पहले उसने बंगला खाली कर दिया था. कहा जाता है भगवती वेदनायकी देवी ने उसे बाढ़ आने की चेतावनी पहले ही स्वप्न में दे दी थी. कलक्टर गैरो ने देवी का एहसान मानकर मंदिर को हाथीदांत की बनी पालकी और कुछ जवाहरात भेंट किये.

भवानी से आगे दक्षिण में ईरोड शहर बसा है. कावेरी से निकाली गयीं पेरुम्पालयम और कलिंगरायन नामक दो नहरों का उल्लेख यहां किया जा सकता है, जो तमिल में 'ओदई' के नाम से प्रसिद्ध हैं. एक प्रचलित दंतकथा के अनुसार, इस स्थान का नाम तमिल के दो शब्द 'ईर' और 'ओडु' के मिलने से बना है, जिसका अर्थ है – भीगी खोपड़ी. देवीभागवत में दक्ष प्रजापति द्वारा यज्ञ किये जाने की कथा है. इस यज्ञ में सम्मिलित होने के लिए दक्ष प्रजापति ने अपने जमाई भगवान शिव को आमंत्रित नहीं किया. लेकिन दक्ष की पुत्री दाक्षायणी या पर्वती बिना बुलाये ही वहां पहुंच गयीं. उनके मां-बाप ने उनकी उपेक्षा की. इससे दुखी होकर वे यज्ञकुंड में कूद पड़ीं. इसकी सूचना मिलने पर शिव को बड़ा क्रोध आया और उन्होंने अपनी जंटाओं से वीरभद्र और भद्रकाली नामक दो गण उत्पन्न किये. ये दोनों यज्ञशाला में गये. उन्होंने दक्ष तथा उसके अनुचरों को मारकर यज्ञ कुंड में डाल दिया और उनकी खोपड़ियां और हड्डियां कावेरी में फेंक दीं, जहां वे हमेशा गीली रहती हैं.

ईरोड के दक्षिण-पश्चिम में पश्चिमी घाट से नोय्याल नाम की एक बरसाती नदी निकलती है. यह कोयम्बत्तूर और तिरुप्पूर शहरों में से होकर कावेरी से मिलती है.

कोयम्बत्तूर तमिलनाडु का दूसरे नंबर का सबसे बड़ा शहर है. यहां 3000 कारखाने और कपड़ा-मिलें हैं. इसलिए इसे दक्षिण भारत का मैंचेस्टर कहा जाता है. कोयम्बत्तूर 'कोवै' नाम से भी प्रसिद्ध है. इससे 7 कि.मी. दूर नोय्याल नदी के किनारे शिव का पेरूर पट्टीश्वरस्वामी का मंदिर है. इसके कनकसभा नामक मंडप में बड़ी कलात्मक मूर्तियां बनी हुई हैं. कहा जाता है कि इसका निर्माण ईसा पूर्व पहली शताब्दी में

हुआ था. गर्भगृह की मूर्ति चोल राजा करिकालन ने बनवायी थी.

करूर में अमरावती नामक तीसरी सहायक नदी कावेरी में मिलती है. 200 कि.मी. लंबी यह नदी कोयम्बत्तूर जिले की अण्णामलै पहाड़ियों से निकलती है. इस पर बने जलाशयों में इतना पानी उपलब्ध है कि इस जिले की 5 लाख एकड़ भूमि की सिंचाई उससे होती है. संगम से निकाली गयी उय्यकोंडन नहर से तिरुचिरपल्ली शहर को भी पानी दिया जाता है.

कावेरी और अमरावती नदियां चेर, चोल और पांड्य राज्यों की प्राकृतिक सीमाएं रहीं. इन तीनों राज्यों के शासक कोई भी महत्त्वपूर्ण बातचीत करने से पहले संगम पर बने मंदिर में जाकर *चेल्लांडियम्मन* देवी के दर्शन जरूर करते थे. यहीं अगस्त्य ऋषि का मंदिर है. लोगों को नदी पार कराने वाले नाविक अपनी आमदनी का कुछ भाग आज भी इस मंदिर में चढ़ाते हैं. पास ही नेरूर में कांची के आचार्य परमशिवेंद्र सरस्वती के शिष्य संत-संगीतकार सदाशिव ब्रह्मेन्द्र की समाधि है. उनके बारे में एक घटना का उल्लेख किया जाता है. एक बार वे कावेरी के किनारे कोडुमुडि के पास ध्यानस्थ बैठे थे. तभी अचानक बाढ़ आ गयी और नदी के किनारे उसमें डूब गये तथा स्वामीजी रेत में दब गये. जब उन्हें रेत में से निकाला गया तो उन्होंने बड़ी शांति से अपने शरीर पर से रेत झाड़ी और चल दिये, जैसे कुछ न हुआ हो. कहा जाता है कि तिरुवय्यारु में कावेरी की धारा से जैसे त्यागराज के गीतों का स्वर उठता है, उसी प्रकार नेरूर में कावेरी की धारा से सदाशिव ब्रह्मेन्द्र के गीतों का मधुर नाद सुनाई देता है.

नदी-प्रदूषण

मेट्टूर और तिरुचिरपल्ली का क्षेत्र संभवतः तमिलनाडु का सबसे बड़ा औद्योगिक क्षेत्र है. मेट्टूर और भवानी बांधों के आस-पास और कावेरी तथा उसकी सहायक भवानी, नोय्यल, अमरावती नदियों के किनारों पर कारखाने लगे हुए हैं, जिनमें

कोडुमुडि स्थित मंदिर

हजारों लोगों को काम मिला है और आर्थिक लाभ हुआ है. लेकिन इन कारखानों का नदियों पर बुरा प्रभाव पड़ा है. वे लगभग गंदे नाले बनकर रह गयी हैं. मेट्टूर, भवानी, ईरोड, कोयम्बत्तूर और तिरुप्पूर आदि शहरों का मैला और कारखानों का औद्योगिक कचरा प्रतिदिन कावेरी और उसकी सहायक नदियों में बहा दिया जाता है. इससे नदी-किनारे की फसलों पर और लोगों के स्वास्थ्य पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ रहा है.

तिरुप्पूर के पास नोय्याल का प्रदूषित जल-क्षेत्र

भवानी नदी के किनारे पर स्थित कारखानों से निकला कचरा इतना विषाक्त होता है कि मूंगफली, धान और गन्ने की फसलों की उपज बहुत घट गयी है. एक समय था जब कारखानों के आगे नदी के निचले बहाव पर बने भवानी सागर बांध में काफी मात्रा में मछली पकड़ी जा सकती थी. लेकिन अब प्रदूषण के कारण मछली की कुछ प्रजातियां बिलकुल विलुप्त हो गयी हैं. इस पानी का उपयोग करने वाले लोगों को फेफड़ों और आंतों की बीमारियां हो गयी हैं.

लेकिन अभी भी आशा की किरण शेष है. 1993 में भवानी नदी का प्रदूषण रोकने के लिए आंदोलन शुरू हुआ और अब न्यायालयों ने कारखानों को आदेश दिया है कि वे कचरे की सफाई के लिए कचरा-शोधन संयंत्र लगाएं, अन्यथा उन्हें बंद करा दिया जायेगा.

प्रदूषण के कारण नोय्याल को 'काली नदी' कहा जाता है, क्योंकि केवल 173 कि.मी. लंबी यह नदी तिरुप्पूर की कपड़ा-रंगाई और धुलाई की करीबन 800 इकाइयों से और कोयम्बत्तूर के कारखानों से निकलने वाले कचरे तथा मैले से लबालब भर गयी है. नोय्याल नदी पर बने ओरतपालयम बांध का निर्माण 1992 में पूरा हुआ था और आशा की गयी थी कि नोय्याल के तटप्रदेश की 5% प्रतिशत भूमि में सिंचाई की जा सकेगी. लेकिन तिरुप्पूर से करूर तक के किसान अब नदी के पानी से सिंचाई नहीं करते, क्योंकि यह पानी उपयोग के काबिल नहीं रह गया है. हाल ही में न्यायालयों ने जनहित के महत्त्व का एक निर्णय दिया है. उन्होंने निर्यात से 2000 करोड़ रु. प्रतिवर्ष कमाने वाले तिरुप्पूर के कारखानों से कहा है कि नदी और जलाशय के पानी तथा पेंदी की सफाई करें. साथ ही उन्हें यह आदेश भी दिया गया है कि 1998 तक वे सब मिलकर एक कचरा-शोधन संयंत्र लगाएं.

ईरोड के निकट कारखानों का सारा कचरा कावेरी में बहा दिया जाता है.
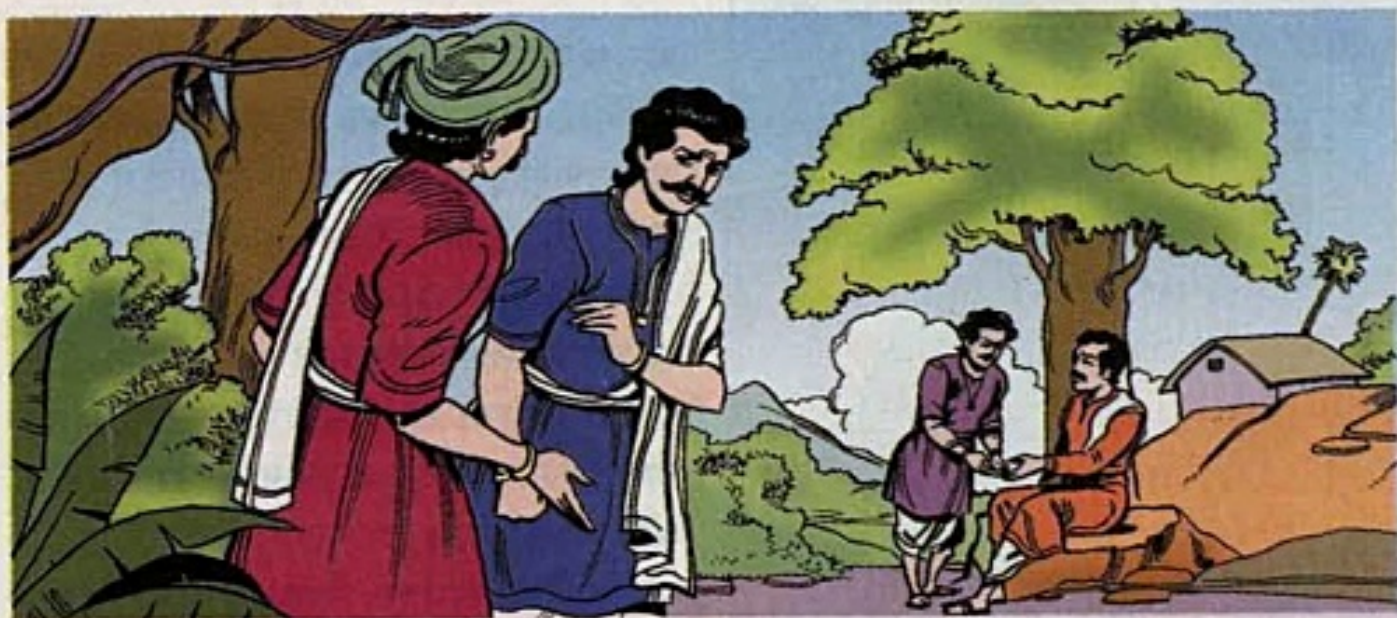
सरन का बुद्धि-बल

सरन और श्याम दो घने मित्र थे। दोनों एक ही गाँव के निवासी थे। दोनों अपने-अपने काम एक साथ मिल कर करते थे। किन्तु सरन के काम और बुद्धि की सर्वत्र प्रशंसा होती और श्याम को मूर्ख व निकम्मा माना जाता। श्याम को इसका बड़ा दुख था। सरन प्रायः उसे समझाता रहता,-"दूसरों की बातों पर ध्यान मत दो। कोई कुछ कह दे तो बुरा न मानना, क्योंकि लोगों को हर हालत में कुछ न कुछ कहने की आदत होती है। यदि तुम अपने काम से सन्तुष्ट हो, यदि तुमने पूरी सचाई से काम किया है तो तुम्हें दुखी नहीं होना चाहिए। तुम अपने को क्या समझते हो, यह महत्वपूर्ण है। लोग तुम्हें क्या समझते हैं, यह नहीं।"

एक दिन दोनों मिल कर अपनी-अपनी पत्नी के लिए सोने की चूड़ियाँ खरीदने शहर गये। थोड़ी दूर जाने पर एक पेड़ के नीचे बैठे दो यात्री मिले। वे ऊँची आवाज में वाद-प्रतिवाद कर रहे थे। लग रहा था जैसे आपस में झगड़ रहे हों। दोनों मित्रों ने उनके पास जाकर पूछा कि बात क्या है।

दोनों यात्रियों में से एक मूल्यवान वस्त्र धारण किये हुए था। उसने अपनी कहानी सुनाते हुए कहा, "मैं व्यापारी हूँ। व्यापार में मैंने करोड़ों रुपये कमाये। मेरे दो बेटियाँ हैं। दोनों एक विचित्र रोग से पीड़ित हैं। किसी वैद्य-हकीम को पता न चला कि क्या रोग है। उनकी दवा से कोई लाभ न हुआ। अन्त में निराश होकर उन्हें एक महात्मा के पास ले गया। उन्होंने दोनों बेटियों को देख कर कहा कि ये तुम्हारे पापों की सजा भोग रहे हैं। इनके लिए हर रोज सोने की दो-दो चूड़ियाँ बनवाओ और नये-नये स्थानों पर जाकर आधी कीमत पर बेचो। ऐसा करने से ये दस दिनों में पूर्ण स्वस्थ हो जायेंगी।

उन महात्मा के आदेशानुसार ही मैं चूड़ियाँ बेचने यहाँ बैठा हूँ। यह दूसरा व्यक्ति सुनार है। इसने इन चूड़ियों को जाँच कर देखा और जब इसे पक्का विश्वास हो गया कि ये शुद्ध सोने की हैं तो अब इन्हें स्वयं खरीदना चाह रहा है। लेकिन इसके

भूपति राजा
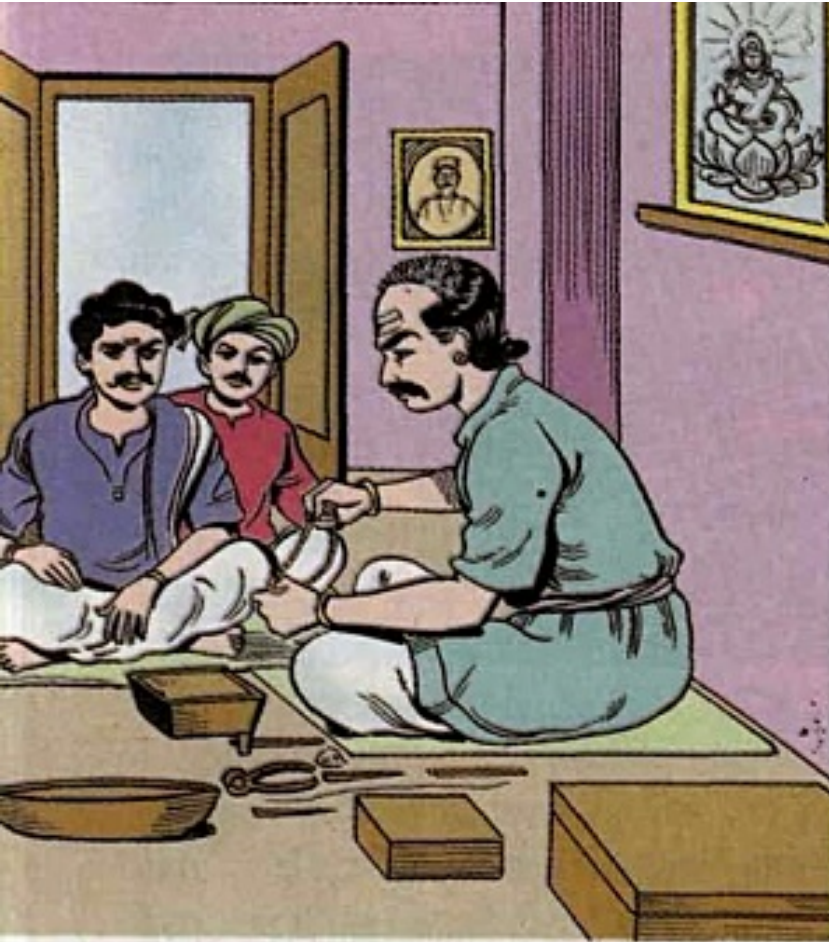
पास पूरे पैसे नहीं है। केवल तीन सौ हैं, जबकि चूड़ियां पाँच सौ की हैं। बाकी पैसे अपने गाँव में चल कर देने को तैयार है, किन्तु इसका गाँव विपरीत दिशा में है और हमें अपना गाँव जल्दी ही पहुँचना है।

बाकी दो सौ रुपयों के बदले यदि मैं उसके गाँव नहीं जा सकता तो वह सोने की अपनी अंगूठी दे सकता है। परन्तु उसकी अंगूठी असली सोने की है या नहीं, यह मुझे कैसे मालूम। मैं सुनार नहीं हूँ इसलिए खरे सोने की पहचान नहीं कर सकता। वह तो स्वयं सुनार है, इसलिए उसने मेरी चूड़ियों को जाँच कर देख लिया कि ये शुद्ध सोने की हैं।

मैं इसलिए अपनी चूड़ियाँ इसके हाथ बेचना नहीं चाह रहा हूँ। परन्तु यह सुनार जिद्द कर रहा है। इसी बात पर हम दोनों में विवाद है।

सरन कुछ बोलना ही चाहता था कि सुनार ने बीच में उसे टोकते हुए कहा,-''हम दोनों के बीच में किसी तीसरे व्यक्ति को हस्तक्षेप करने की जरूरत नहीं है। सौदा हम दोनों के बीच में हो रहा है। हम लोग आपस में तय कर लेंगे।''

''लेकिन हम दोनों भी सोने की चूड़ियाँ ही खरीदने के लिए शहर जा रहे हैं। यदि हमारा काम यहीं बन जाये तो शहर जाने से बच जायेंगे। हमलोग तो पूरी कीमत भी देने को तैयार हैं।'' सरन ने दोनों को सुना कर कहा।

सुनार इस पर बोला, ''पहला ग्राहक मैं हूँ। सौदे पर पहला हक मेरा है। मूल्य तो मैं भी देने को तैयार हूँ। भीख में तो नहीं माँग रहा हूँ। बाकी दो सौ के बदले या तो मेरी अंगूठी ले लो या मेरे गाँव चल कर नक़द पैसे ले लो।''

व्यापारी नाराज होकर सुनार से बोला, ''कह दिया न कि मैं चूड़ियाँ तुम्हें नहीं बेचूँगा।

सरन और श्याम सुनार को दिये व्यापारी के इस दो टूक उत्तर से बहुत प्रसन्न हुए और उसे पाँच सौ रुपये देकर चूड़ियाँ खरीद लीं। वे इस बात पर बड़े प्रसन्न थे कि उन्हें भाग्य से सोने की चूड़ियाँ आधे मूल्य पर मिल गईं। उन्हें सोने की असलियत पर कतई सन्देह नहीं था। फिर भी गाँव पहुँच कर सुनार को दिखाया।

गाँव के सुनार ने चूड़ियों को गौर से परखा और कहा-''ये नक़ली सोने की हैं। एक चूड़ी पचीस रुपये से अधिक की नहीं होगी। आप लोगों ने कहीं अधिक दाम तो नहीं दिया।''

''नहीं, बहुत ज्यादा नहीं, किन्तु थोड़ा अधिक जरूर दे दिया है।'' सरन ने असलियत छिपाते हुए कहा। फिर अपनी-अपनी चूड़ियाँ लेकर घर आ गये।

घर आकर सरन ने सारी बातें पत्नी को बता दीं। लेकिन पत्नी को सरन के इस काम में कोई दोष नहीं दिखाई पड़ा। बल्कि उसने उसकी बुद्धिमानी की प्रशंसा ही की। उन्होंने कहा,-''यदि ये चूड़ियाँ असली सोने की होतीं और आप इन्हें न खरीदते तो आप एक सुनहला मौका खो देते। अक्लमन्द व्यक्ति ऐसा मौका अपने हाथ से जाने नहीं देते। आप वास्तव में बहुत अक्लमन्द हैं। परन्तु भाग्य के सामने अक्लमन्द कुछ नहीं कर सकता। भाग्य साथ दे तो बड़े से बड़ा षड्यंत्र भी विफल हो जाता है। यही समझ लीजिए कि भाग्य ने हमारा साथ नहीं दिया। परन्तु आपने जो किया, हरेक अक्लमन्द को वही करना चाहिए। इसलिए चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है।''

उस समय श्याम भी सरन के पास था और उसकी पत्नी की बातें सुन रहा था। यह सब सुन कर उसे सांत्वना और शान्ति मिली।

उसने भी घर जाकर सारा हाल अपनी पत्नी को बताया। लेकिन उसकी पत्नी ने श्याम को फटकारते हुए कहा,-''मैं जानती थी कि तुम ठगे जाओगे। तुम्हें कोई भी मूर्ख बना सकता है। मूर्ख जो हो! अच्छा होता यदि मैं भी साथ चलती। गलती तो मेरी है।''

थोड़ी देर चुप रह कर पति को कोसते हुए फिर वह बोली,-''तुमने विश्वास कैसे कर लिया कि कोई असली सोना आधे दाम पर दे देगा। इसमें बड़ा भारी षड्यंत्र लगता है और हो सकता है इस षड्यंत्र में सरन का भी हाथ हो।''

श्याम अपने दुर्भाग्य पर बहुत दुखी था। सोच रहा था कि सरन कितना भाग्यशाली है। धोखा तो उसने भी खाया पर उसकी पत्नी ने फिर भी उसकी बुद्धि की तारीफ़ की। मेरी पत्नी ने भी उसे मूर्ख नहीं माना बल्कि यह कहा कि इस षड्यंत्र में उसका भी हाथ हो सकता है यानी वह इतना होशियार है। वह अपने भाग्य को कोसता हुआ बच्चों की तरह फूट-फूट कर रोने लगा।

उधर सरन भी अपने घर के एकान्त में बैठा सोच रहा था। वह अपने भाग्य को नहीं, बरन् अपनी बुद्धि को कोस रहा था कि क्यों वह एक अपरिचित व्यक्ति के द्वारा इतनी आसानी से मूर्ख बना दिया गया। फिर भी उसकी पत्नी ने उसे मूर्ख नहीं, अक्लमंद ही कहा। उसने निश्चय किया कि सचमुच वह अपनी अक्लमन्दी साबित करेगा और खोई हुई रकम पुनः प्राप्त करेगा।

खूब सोचने-विचारने के बाद उसे एक बात याद आई। गाँव में कालू के अतिरिक्त और किसी को मालूम नहीं था कि वह श्याम के साथ सोने की

चूड़ियाँ खरीदने शहर जा रहा है। कुछ दिनों पूर्व कालू अपनी बेटी की शादी के लिए सोना खरीदने शहर गया था। इसीलिए उसने और श्याम ने शहर जाते वक्त उससे यह पूछ लिया था कि शहर में खरा सोना कहाँ मिलता है। उन ठगों के पास भी ठीक चार ही चूड़ियाँ थीं। हो सकता है, कालू, चूड़ियों के लिए हमारा शहर जाना और ठगों के बनावटी झगड़े-ये सब एक ही नाटक के दृश्य हों।

वह फौरन तेजी से उठा और ग्राम पंचायत के प्रधान के पास जाकर सारी बातें विस्तार से बता दीं। और सन्देहास्पद व्यक्ति कालू का नाम भी बता दिया। प्रधान को कालू की काली करतूतों की जानकारी तो थी, पर कोई प्रमाण नहीं था। वह ऐसे ही मौके की तलाश में था। उसने सरन की बातों का समर्थन किया और सचाई की जाँच का आश्वासन देकर उसे भेज दिया।

प्रधान ने कालू की गतिविधियों पर नज़र रखने के लिए दो भेदिये छोड़ दिये जो बहुरुपिया बन कर उस पर निगरानी रखने लगे।

उसी दिन, रात के समय कालू पड़ोस के गाँव में अपने भागीदार-ठगों से अपने हिस्से का धन वसूलने गया। पंचायत-प्रधान के आदमियों ने तभी उसे और गिरोह के अन्य व्यक्तियों को भी रंगे हाथों पकड़ लिया। उन्होंने स्वीकार कर लिया कि सरन और श्याम को नकली सोने की चूड़ियाँ उन्होंने ही दी थीं। सरन और श्याम को पैसे वापस मिल गये।

सरन ने जब अपनी पत्नी को यह खुश खबरी सुनाई तो पत्नी बोली,-''अक्ल हो तो ऐसी! ठगा हुआ धन वापस ले लेना आप जैसे बुद्धिमान व्यक्ति का ही काम हो सकता है। धन्य है आप का बुद्धि-बल!"

श्याम ने भी यह खबर अपनी पत्नी को सुनाई। उसने यह भी कहा कि सरन अपनी पत्नी से प्रोत्साहन पाकर ही यह सब कर पाने में सफ़ल हुआ। लेकिन उसकी पत्नी अपने दृष्टिकोण को ही सही बताती हुई बोली,-''सरन की पत्नी ने उसके बुद्धि-बल की भरपूर प्रशंसा की, इसीलिए उसने अपनी बुद्धि को और तीक्ष्ण बनाने का प्रयत्न किया। मैंने कड़वी बातें कहीं, पर उसका कोई लाभ नहीं हुआ। उल्टे कोने में बैठ कर भाग्य को कोसने लगे। लगता है कि तुम्हें कभी अक्ल नहीं आयेगी।"

पर, इस बार श्याम न तो पत्नी पर नाराज़ हुआ और न दुखी। बल्कि उसने महसूस किया कि पत्नी ने ठीक ही कहा। उसे सचमुच बहुत कुछ सीखना है। पत्नी के दुत्कार में आज उसे प्रेरणा की किरण दिखाई पड़ी-कुछ सीखने की प्रेरणा।

कारवाई मुख

बहुत पहले की बात है। एक राजा का एक बहुत बुद्धिमान और अनुभवी वृद्ध मंत्री था। राजा ने उससे अधिक बुद्धिमान मंत्री नहीं देखा था।

एक दिन मंत्री ने राजा से कहा कि अब उसके अवकाश ग्रहण करने का समय आ गया है। अब वह जीवन के अन्तिम दिन अधिक से अधिक आराम में बिताना चाहता है।

मंत्री के तीन युवा पुत्र थे और तीनों समान रूप से प्रतिभाशाली और कर्तव्यनिष्ठ थे।

"यदि आप अवकाश ग्रहण करना चाहते ही हैं, मेरे मित्र, तो आप के तीनों पुत्रों में से किसी एक को मुझे आप का उत्तराधिकारी चुनने दीजिए। मैं समझता हूँ कि आप का ज्येष्ठ पुत्र ठीक रहेगा। आप का क्या विचार है?" राजा ने मंत्री से कहा।

"महाराज! यह इस बात पर निर्भर करता है कि आप अपने मंत्री से अपेक्षा क्या करते हैं। यदि आप निर्भीक और दुस्साहसी व्यक्ति चाहते हैं तो मेरा ज्येष्ठ पुत्र निस्सन्देह बहुत उपयुक्त होगा। यदि आप को इस पद के लिए बहुत चतुर और बुद्धिमान व्यक्ति चाहिए तो मेरा द्वितीय पुत्र सही चुनाव होगा। और यदि आप को एक सत्यनिष्ठ व्यक्ति की आवश्यकता है तो उसके सर्वथा योग्य मेरा कनिष्ठ पुत्र है।" मंत्री ने उत्तर दिया।

"अपने पुत्रों के चरित्र के विषय में इतना सुनिश्चित विश्वास के साथ आप कैसे कह सकते हैं? क्या आप प्रमाणित कर सकते हैं कि उनके विषय में आप की राय ठीक है?" राजा ने प्रश्न किया।

"कर सकता हूँ, महाराज!" मंत्री ने उत्तर दिया।

राजा ने उत्सुकता के साथ कहा, - "सचमुच! मैं चाहूँगा कि आप इसे प्रमाणित करें।"

"बहुत अच्छा महाराज!" कुछ देर रुक कर मंत्री ने कहा। "मैं तीनों को एक आदेश दूँगा। देखते हैं, इन तीनों में से प्रत्येक उसे किस प्रकार अंजाम देता है।"

आत्म-नियंत्रण सबसे बड़ी विजय है। यह चिरस्थायी प्रसन्नता का आधार है। - श्रीमाँ

फिर उसने तीनों बेटों को एक कमरे में बुलाया। राजा एक गुप्त बातायन से उन्हें देख रहे थे।

मंत्री ने सिंह की दहाड़ के समान गंभीर स्वर में कहा, -"सुनो मेरे पुत्रो! शाहीं बाग के केन्द्र में एक विशेष प्रकार का गुलाब का पौधा है। मैं चाहता हूँ कि तुममें से प्रत्येक उसका एक फूल तोड़ कर लाये। इस कार्य को गंभीरतापूर्वक लो।

"एक खतरे के प्रति मैं तुम्हें सावधान कर देना चाहता हूँ। उस खास पौधे से फूल तोड़ना मना है। यदि तुम पकड़े गये तो सजा से बचने के लिए सिर्फ़ अपने मुख का प्रयोग कर सकते हो। हाँ, सिर्फ़ अपने मुख का।"

गोधूलि की बेला थी। पुत्रों ने अपने पिता के चरण-स्पर्श किये और विदा ली। वे बाग में घुसे और लुक-छिप कर पौधे तक पहुँच गये। किन्तु, जैसे ही उन्होंने फूल तोड़े कि सावधान पहरेदारों ने उन्हों पकड़ लिया।

ज्येष्ठ पुत्र ने तुरन्त अपने मुख से कर्ण भेदी चीख निकाली और पहरेदार के हाथ में दाँत काटने के लिए अपना मुख खोला। भयभीत पहरेदार की पकड़ ढीली हो गई, जिससे वह बच निकलने में सफल हो गया।

द्वितीय पुत्र ने गुलाब का फूल अपने मुख में छिपा लिया और अपने को निर्दोष बताया।

कनिष्ठ पुत्र शांत बना रहा और पहरेदार के साथ चुपचाप राजा के पास चला गया। उसने अपना दोष स्वीकारते हुए कहा, - "मैं जानता हूँ, महाराज! कि वह निषिद्ध पौधा है, किन्तु मेरे मन में एक बात पर कोई शक नहीं था कि यदि आप के बुद्धिमान मंत्री ने फूल तोड़ने के लिए कहा है तो अवश्य ही इसका कोई समुचित कारण होगा।"

मंत्री ने तीनों के व्यवहार को स्पष्ट करते हुए कहा, - "देखिए महाराज! प्रत्येक ने पकड़े जाने पर अपने मुख का प्रयोग किया, जैसा कि मैंने उन्हें आदेश दिया था। लेकिन सबने इसे अपने-अपने ढंग से, अपने-अपने स्वभाव के अनुसार किया। एक ने मुख का प्रयोग हिंसात्मक ढंग से किया, एक ने चतुराई से और एक ने सच बोल कर किया।"

प्रसन्न होकर राजा मुस्कुराये और बोले, - "बिल्कुल ठीक मेरे प्रिय मंत्री, किन्तु तीनों ही अपने-अपने तरीके से योग्य हैं। आप का ज्येष्ठ पुत्र सेनाधिकारी बन सकता है और दूसरा मेरे सलाहकार के रूप में काम कर सकता है। किन्तु, सबसे छोटा पुत्र ही, जो बुद्धिमान है, उस पद के योग्य है, जिसे आप छोड़ रहे हैं।"

महाभारत

धृतराष्ट्र को कृष्ण ने जो दिव्य दृष्टि प्रदान की, उसके द्वारा उसने कृष्ण के विश्व-रूप को देखा। तब उसने कृष्ण से कहा,- "भगवन, तुमने बड़ी कृपापूर्वक ये दिव्य नेत्र प्रदान किये, इन्हें तुम वापस ले लो। जिन नेत्रों से मैंने तुम्हारे रूप को देखा, उन नेत्रों से मैं साधारण मानव और इस विश्व को देखना नहीं चाहता।"

दूसरे ही क्षण सभाभवन पूर्ववत हो गया। कृष्ण भी साधारण रूप में दिखाई देने लगे। कृष्ण ने सभा में उपस्थित ऋषियों से विदा लेकर एक हाथ सात्यकी तथा दूसरा हाथ विदुर के हाथ में दिया, और सभाभवन से निकल पड़े। उनके साथ कौरव तथा अन्य राजा भी चल पड़े।

सभाभवन के द्वार पर दारुक रथ के साथ तैयार खड़ा था। कृष्ण रथ में जा बैठे, तब धृतराष्ट्र ने उनसे कहा,-"कृष्ण, तुम मुझे गलत न समझो। पाँडवों के प्रति मेरे मन में किसी प्रकार का द्वेष नहीं है; मैंने दुर्योधन को तुम्हारे सामने ही समझाया, सभी सभासदों ने भी सुना।"

इसके बाद कृष्ण ने धृतराष्ट्र, भीष्म, द्रोण, बाह्लिक, कृप इत्यादि बुजुर्गों को लक्ष्य करके कहा- "महात्माओ, आप लोगों ने देखा कि सभा में क्या क्या हुआ! दुर्योधन रोष के मारे सभा से चला गया। धृतराष्ट्र ने अपने को असमर्थ बताया। मैं जिस कार्य के निमित्त आया था, वह पूरा हो चुका। मैं युधिष्ठिर के पास वापस जा रहा हूँ। मुझे आज्ञा दीजिये।" सभी बुजुर्ग कृष्ण को विदा करके अपने-अपने घर चले गये। तब कृष्ण रथ पर अपनी फूफी कुंती के घर गये। कुंती को सारा समाचार सुनाया और कहा, "देवी, सब लोगों ने अनेक प्रकार से दुर्योधन को समझाया, पर उसने सुनने का नाम तक नहीं लिया। लगता है कि कौरवों का अंतिम समय निकट आ

गया है। अर्जुन उन्हें दावाग्नि की तरह जला देगा। मैं पांडवों के पास जा रहा हूँ। क्या तुम कोई संदेशा देना चाहती हो?"

"बेटा, युधिष्ठिर से कहो कि वह धर्ममार्ग का अतिक्रमण न करे। बाहुओं के बल पर जीना क्षत्रियों का धर्म है। इसके वास्ते उन्हें हिंसा भी करनी पड़े तो वह विधि का विधान ही कहा जायेगा। सुना है कि प्राचीन काल में कुबेर ने मुचिकुंद नामक राजर्षि को समस्त पृथ्वी मण्डल देना चाहा, मगर उसने उसे ग्रहण करने से अस्वीकार करते हुए कहा था- "मैं अपने बाहुबल से जो राज्य जीत सकूँगा, वही मेरे लिए पर्याप्त है।" इस वक्त युधिष्ठिर जिस मार्ग का अनुसरण कर रहा है, वह मुझे बिल्कुल पसंद नहीं है। वह मार्ग राजा पांडु अथवा भीष्म के लिए भी स्वीकार योग्य नहीं है। उससे कहो, युधिष्ठिर के लिए नित्यप्रति मैं यज्ञ, दान, तप, वीरता, बल की प्राप्ति चाहती हूँ। राज्य का शासन धर्मपूर्वक करना उत्तम क्षत्रिय का लक्षण है। भिक्षाटन, कृषि और वाणिज्य क्षत्रिय के लिए शोभा नहीं देते। पांडवों को अपने पिता के राज्य को पुनःप्राप्त करना चाहिए। परायों के आश्रय में जीने से मुझे कौन-सा सुख प्राप्त होगा? युधिष्ठिर से कह दो कि वह युद्ध करके अपने पिता और पितामहों को उत्तम लोकों की प्राप्ति में योग दे।"

कृष्ण कुंती के महल से निकलकर कौरव प्रमुखों से विदा ले सात्यकी और कर्ण को अपने रथ पर बिठाकर रवाना हुए। रथ नगर को पार करके जब निर्जन प्रदेश में पहुँचा तब कृष्ण ने कर्ण से एकांत में कहा, "कर्ण! तुम ने वेद और धर्मशास्त्रों का अध्ययन किया है। इसलिए तुम सारी बातें समझ सकते हो। कन्या के गर्भ से जिस का जन्म होता है, उसे कानीन कहते हैं। ऐसी कन्या जिस के साथ विवाह करेगी, वही व्यक्ति कानीन का पिता है। तुम कुंतीदेवी के गर्भ से कानीन होकर पैदा हुए हो, इसलिए तुम राजा पांडु के ज्येष्ठ पुत्र हो। धर्मशास्त्र के अनुसार तुम राजा बनने योग्य हो। पिता के पक्ष में पांडव तथा माता के पक्ष के वृष्टिवंशी लोग तुम्हारे रिश्तेदार हैं। तुम मेरे साथ चलोगे तो पांडव, उनके पुत्र, पांडवों के पक्ष में लड़ने के लिए आये हुए सभी राजा तुम्हारे चरणों में प्रणाम करेंगे। तुम्हारा राज्याभिषेक होगा। द्रौपदी तुम्हें अपने छठे पति के रूप में स्वीकार करेगी। युधिष्ठिर तुम्हारे लिए युवराजा बनकर रहेगा। तुम राज्य ग्रहण करोगे तो कुंतीदेवी प्रसन्न हो जायेगी।"

इस पर कर्ण ने कहा, "कृष्ण, मेरे प्रति प्रेम और स्नेह के कारण तुमने जो कुछ बताया, मैंने सुना। इसमें कोई संदेह नहीं है कि मैं राजा पांडु का पुत्र हूँ। कुंतीदेवी ने जन्म देकर मुझे नदी में फेंक दिया तो अतिरथी नामक सूत ने मुझे ले जाकर अपनी पत्नी राधा के हाथ सौंप दिया। असंख्य यातनाएँ झेलकर मेरा पोषण करने वाले उन दंपति का श्राद्ध करना क्या मेरा धर्म नहीं है? उन लोगों ने मेरा बसुषेण नामकरण किया। मैंने उनके रिश्तेदारों की कन्या के साथ विवाह भी किया है। मेरे पुत्र और पौत्र भी हो गये हैं।

अब मैं उनके परिवार का सदस्य हूँ। वे ही हमारे कुटुम्ब हैं। जन्म देने वाली माँ से बड़ी होती है जीवन देने वाली माँ। राधा ही मेरी असली माँ है। उसने अपना रक्त देकर मुझे पाला है। मेरी धमनियों में उसी का रक्त है। मेरे शरीर का हर कोषाणु उसका ऋणी है। कुन्ती ने आज तक मेरी खोज खबर नहीं ली। क्या कोई माँ ऐसा कर सकती है? उसने ऐसा इसलिए किया कि उसके पाँच पुत्र हैं। राधा का तो एक ही पुत्र है। क्या तुम मुझे अपनी माँ के प्रति कृतघ्न बनने का उपदेश दे रहे हो, कृष्ण?

गत तेरह वर्षों से धृतराष्ट्र के महल में, दुर्योधन के आश्रय में राजभोगों का अनुभव कर रहा हूँ। मेरा समर्थन पाकर ही दुर्योधन पांडवों के साथ युद्ध के लिए तैयार हुआ है। उसने अर्जुन के साथ द्वन्द्व युद्ध करने को मुझ से कहा है। इसलिए मैं भय या लोभ के कारण भी दुर्योधन के प्रति अन्याय नहीं कर सकता। मैं अर्जुन के साथ युद्ध न करूँ तो हम दोनों का अपयश होगा। तुम तो जानते हो कृष्ण, मैं

दुर्योधन का कितना ऋणी हूँ। उसने मुझे उस समय आदर दिया जब सभी पाँडव मुझे दुत्कार रहे थे। उस समय भी तुम मेरे जन्म के रहस्य को और मेरे जन्म जात गुणों को जानते थे। फिर क्यों नहीं संसार को बताया कि मैं कौन हूँ। आज मैं जो कुछ हूँ राधा और दुर्योधन के कारण हूँ। मैं मन, प्राण और शरीर से उनके ऋण-सूत्र में बंधा हुआ हूँ। मैं उनके साथ विश्वासघात नहीं कर सकता। तुम्हारी सहायता पाकर पांडव अवश्य विजयी होंगे। युधिष्ठिर को यदि यह मालूम हो जाये कि मैं उसका अग्रज हूँ तो वह राज्य की कामना नहीं करेगा। मैं यदि सारा विश्व भी जीत लूँ तो उसे दुर्योधन को ही दूँगा। इसलिए युधिष्ठिर को ही सारी पृथ्वी पर शासन करने दो। दुर्योधन को प्रसन्न करने के लिए मैंने पांडवों को नीचा दिखाते हुए अपने विचार

प्रकट किये हैं। इसके लिए मैं पश्चात्ताप कर रहा हूँ। मगर मेरी ये बातें किसी से न कहो और अर्जुन को युद्ध के लिए सन्नद्ध करो।"

इस पर कृष्ण ने हँसकर कहा, "तब तो तुम राज्य की कामना नहीं रखते। अच्छी बात है। यह महीना युद्ध के लिए अनुकूल है। एक सप्ताह में अमावास्या पड़ेगी। तुम भीष्म, द्रोण और कृपाचार्य से कहो कि उस दिन युद्ध प्रारंभ किया जाये। तुम भी युद्ध के लिए तैयार हो जाओ।"

इसके बाद कर्ण ने कृष्ण के साथ आलिंगन किया और उनसे बिदा लेकर अपने रथ पर घर लौट आया।

कृष्ण के चले जाने पर बिदुर ने कुंतीदेवी के पास जाकर कहा,-"मैं जो नहीं चाहता था, वही होने जा रहा है। पांडव और कौरव महायुद्ध में लाखों लोगों के प्राणों की बलि देने जा रहे हैं। कृष्ण अपने कार्य में असफल हो कर लौट गये हैं।"

कुंतीदेवी को भी युद्ध में भीष्म, द्रोण आदि जैसे महापुरुषों का मर जाना अत्यंत भयंकर प्रतीत हुआ। उसे लगा कि अपने पुत्रों के द्वारा ज्ञानियों का वध करके युद्ध में विजय पाने की अपेक्षा दरिद्रता में घुल-घुलकर मरना कहीं अच्छा है। उसने यह भी सोचा कि होनेवाली विपत्ति का कारणभूत कर्ण है और वह पांडवों के साथ द्वेष करते हुए उन्हें मारने का निश्चय कर चुका है। इसलिए कुंती ने कर्ण के मन को पांडवों के अनुकूल बदलने का निश्चय किया और वह गंगा के तट पर पहुँची, जहाँ कर्ण जप कर रहा था।

कर्ण ने जप समाप्त करके कुंती को देखा और प्रणाम करके बोला-"माँ, मैं कर्ण हूँ, तुम्हारे चरणों में प्रणाम करता हूँ। बताओ, तुम किस काम से यहाँ पर आयी हो! मेरे द्वारा तुम्हारी क्या सहायता हो सकती है?"

"बेटे, तुम मेरे पुत्र हो! राधा के पुत्र नहीं हो। सूतवंशी भी नहीं हो! मेरी बात पर विश्वास करो। तुम अपने भाइयों से अपरिचित हो! दुर्योधन के वास्ते महान पाप करने जा रहे हो, यह अनुचित है। अर्जुन ने अपनी शक्ति के बल पर जिस राज्य को जीता, उसे कौरवों ने हड़प लिया है। तुम उसे धृतराष्ट्र के पुत्रों से ग्रहण करके तुम्हीं उस राज्य पर शासन करो। बलराम और कृष्ण जैसे तुम और अर्जुन प्रेमपूर्वक रहो। तुम दोनों एक हो जाओगे तो तुम्हारे लिए कोई भी चीज़ असंभव नहीं होगी।" कुंती ने समझाया।

ये बातें सुनकर कर्ण ज़रा भी विचलित नहीं हुआ। उसने कुंतीदेवी से यों कहा, -"माँ, मैं तुम्हारी बातें सुन नहीं सकता। तुमने मेरे प्रति महान पाप किया है। कोई शत्रु भी मेरे प्रति इससे बड़ा पाप नहीं कर सकता। मेरे पैदा होते ही तुमने मुझे फेंक दिया। मैं क्षत्रिय के रूप में जन्म लेकर सूत के घर में पला हूँ। मैं क्षत्रियों के संस्कारों से बिल्कुल अपरिचित हूँ। आज तक तुमने मेरे कुशल-क्षेम जानने का प्रयत्न नहीं किया। आज तुम अपनी भलाई के वास्ते हित की बातें मुझे समझाती हो। इस समय मैं पांडवों के पक्ष में जाऊँगा तो लोग यही कहेंगे कि मैं डरकर उनके पक्ष में गया हूँ। युद्ध की तैयारियाँ हो जाने के बाद यदि मैं यह घोषित करूँ कि मैं पांडवों का भाई हूँ, तो क्या सभी राजा मेरी निंदा नहीं करेंगे? धृतराष्ट्र के पुत्रों ने मुझे आश्रय दिया और मेरा आदर-सत्कार किया। क्या मैं उनका निरादर करूँ? मेरी शक्ति पर निर्भर हो वे युद्ध के लिए तैयार हो गये हैं। उनका ऋण चुकाने के लिए मुझे अपने प्राणों की आहुति देनी होगी। दुर्योधन आदि कौरवों के साथ मैं और मेरे पुत्र अंत तक लड़ेंगे। तुम अपने पुत्रों के वास्ते डरकर मेरे पास आयी हो, फिर भी मैं तुम्हें निराश नहीं करूँगा। मैं सिवाय अर्जुन के तुम्हारे पुत्रों में से और किसी का भी वध नहीं करूँगा। अर्जुन का वध करने पर ही मेरे बल और पराक्रम सार्थक होंगे। युद्ध में यदि अर्जुन मारा जायेगा तब भी मुझे मिलाकर तुम्हारे पांच पुत्र जीवित रहेंगे। यदि मैं मारा जाऊँ तब भी तुम्हारे पांच पुत्र जीवित होंगे। तुम्हारे छः पुत्र कभी जीवित नहीं रह सकते। इसलिए तुम निश्चिंत रहो।"

कुंती ने दुख के आवेश में कर्ण के साथ आलिंगन करके कहा, - "बेटा, विधि के विधान में कौरवों का नाश निश्चित है। मगर तुम यह बात भूल मत जाना कि तुमने अपने चार भाइयों की रक्षा करने का वचन दिया है। तुम्हारा शुभ हो!" यों कुंती ने कर्ण को आशीर्वाद दिया। कर्ण कुंती देवी के चरणों में प्रणाम करके अपने घर लौट आया। कुंती भी अपने निवास को लौट आयी।

हस्तिनापुर से उपप्लाव्य लौटते ही कृष्ण ने पांडवों को सारा समाचार सुनाया। पांडव बड़ी बेचैनी से श्रीकृष्ण की प्रतीक्षा कर रहे थे। इन्हों ने दुर्योधन के षड्यंत्र, धृतराष्ट्र की कपट नीति और कुंती की पीड़ा के बारे में विस्तार से बताया। उन्होंने कर्ण को एकान्त में समझाने पर उसकी प्रतिक्रिया से भी युधिष्ठिर को अवगत कराया। उन्होंने यह भी

बताया कि दुर्योधन के सामने द्रोणाचार्य, कृपाचार्य और पितामह कितने विवश हैं। फिर उन्हों ने बड़ी देर तक पांडवों के साथ मंत्रणा की। तब अपने निवास को लौटकर विश्राम किया।

उस दिन रात को पांडवों ने कृष्ण के साथ युद्ध की तैयारी के संबंध में गंभीर चर्चा की। पांडवों के पक्ष में लड़ने के लिए सात अक्षौहिणियों की सेना तैयार थी। प्रत्येक अक्षौहिणी के लिए एक सेनापति नियुक्त किया गया। विराट, द्रुपद, धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, सात्यकी, चेकितान और भीम सात अक्षौहिणियों के नेता थे। इन सातों नेताओं का एक महा सेनापति हो और वह भीष्म की समताकर सकता हो, ऐसा व्यक्ति कौन हो सकता है! यह सवाल युधिष्ठिर ने अपने भाइयों के सामने रखा। इस पर सहदेव ने विराट का नाम सुझाया, नकुल ने द्रुपद का, अर्जुन ने धृष्टद्युम्न का और भीम ने शिखण्डी का नाम सुझाया। किन्ही दो के विचार मेल नहीं खाते थे, इसलिए युधिष्ठिर ने सलाह दी कि कृष्ण के विचार के अनुसार महा सेनापति को नियुक्त किया जाये। इसपर कृष्ण ने धृष्टद्युम्न का समर्थन किया।

सभी राजाओं को जब मालूम हो गया कि पांडवों की सेनाओं का प्रधान सेनापति धृष्टद्युम्न नियुक्त किया गया है, तब सब लोग बहुत प्रसन्न हुए। सैनिक-संचालन शुरू हुआ। रथ आगे बढ़े, शंख और दुंदुभियों का निनाद सुनायी देने लगा। तब पांडवों की सेनाएँ महा समुद्र की भांति चल पड़ीं। सेना के अग्रभाग में भीम, नकुल और सहदेव चलने लगे। उनके पीछे अभिमन्यु, उप पांडव, धृष्टद्युम्न तथा पांचाल योद्धा चले। सेना के मध्य भाग में युधिष्ठिर थे। सेना के साथ तरह-तरह के वाहन, यंत्रोंवाले आयुध, वैद्य, और परिचारक भी थे। मगर द्रौपदी अपने दास और दासियों के साथ उपप्लाव्य में ही रह गयी।

पांडवों ने सेनाओं के साथ रवाना होने से पूर्व ब्राह्मणों को गायें और सोने का दान करके उनके आशीर्वाद प्राप्त किये।

सेना के पृष्ठ भाग में विराट, कुंति भोज, धृष्टद्युम्न के पुत्र, चालीस हज़ार रथ, दो लाख घोड़े, पांच लाख पैदल सेना, साठ हज़ार हाथियों को साथ ले चेकितान, धृष्टकेतु, सात्यकी, कृष्ण और अर्जुन भी चल पड़े।

उस महा सेना के कुरुक्षेत्र में पहुँचते ही शंख बज उठे। सैनिक परमानंदित हो दिशाओं को प्रतिध्वनित करते सिंहनाद कर उठे।

सच्चा फ़ैसला

प्राचीन काल में गौतमी नदी के किनारे धनगुप्त नामक एक दरिद्र रहता था। वह यह सोचकर बड़ा दुखी होता था कि उसका नाम निरर्थक है। उसने धन कमाने के कई प्रयत्न किये, लेकिन एक भी सफल न हुआ। आखिर ज़िन्दगी से निराश होकर वह नदी में कूद पड़ा।

ठीक उसी समय उधर से निकलनेवाले एक गोसाई ने धनगुप्त को नदी में डूबने से बचाया और पूछा, "तुम क्यों मरना चाहते हो?"

धनगुप्त ने अपनी सारी कहानी सुनायी। गोसाई ने उसे एक तावीज़ देकर समझाया, "तुम इसे बांधे रहोगे तो तुम्हारी क़िस्मत खुल जाएगी, धनी बन जाओगे।" यह कहकर गोसाई अपने रास्ते चला गया।

यह नहीं कह सकते कि वह गोसाई के तावीज़ का प्रभाव था या धनगुप्त में पैदा हुआ आत्म विश्वास था-उस दिन से वह जो भी काम करता, वह सफल होता गया। कुछ ही दिनों में वह भी गाँव के धनियों में से एक गिना जाने लगा। उसने एक सुंदर कन्या से शादी की। कुछ समय बाद उसे एक पुत्र भी पैदा हुआ। अब उसके दिन बड़े आराम से कटने लगे और उसे किसी भी बात की चिंता न थी।

धीरे-धीरे उसने बड़े पैमाने पर व्यापार शुरू किया। कई खेत, मवेशी, घर, वाहन सब कमाया। अपने ये सारे काम देखने के लिए एक मुंशी को भी नियुक्त किया।

कुछ समय के बाद धनगुप्त की पत्नी मर गयी। और कुछ दिन बाद धनगुप्त भी बीमार पड़ा। जब उसे मालूम हुआ कि उसकी मौत निकट है और अपने पुत्र की देखरेख करनेवाला कोई नहीं है, यह सोचकर उसने गाँव के चार बुजुर्गों को बुला भेजा, और उनके सामने वसीयत लिखायी। वसीयत इस प्रकार थी-

पचीस वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

"मेरे मरने के बाद मेरा मुंशी मेरी सारी ज़मीन-जायदाद का रक्षक रहेगा और मेरे पुत्र की सभी ज़रूरतों की पूर्ति करेगा। जब मेरा पुत्र बालिग होगा, तब मुंशी मेरी जायदाद में से वह जितना अपने लिए पसंद करेगा, उतना मेरे पुत्र को देगा और बाक़ी अपने पास रखेगा।"

यह वसीयत देख सभी बुज़ुर्ग अचरज में आ गये। मुंशी बहुत खुश हो गया। उसने सोचा कि उसके मालिक का अंतिम समय में मति-भ्रम हो गया है।

वसीयत लिखाने के बाद निश्चिंत होकर धनगुप्त ने सदा के लिए अपनी आँखें मूँद लीं।

धनगुप्त के पुत्र के बालिग होने तक मुंशी ने उसे किसी तरह की कमी न होने दी।

उसने धनगुप्त के लड़के को ठीक से पढ़ाया-लिखाया और हर तरह से उसे योग्य बनाने की कोशिश की। उसकी हर इच्छा और शौक का ख्याल रखा, ताकि देखनेवालों की नज़र में वह मालिक का विश्वास पात्र मुँशी बना रहे। भीतर से वह बहुत खुश था, क्योंकि वसीयत के अनुसार धनगुप्त की सारी जायदाद उसी की थी, ऐसा वह समझता था। उसने उसके लड़के को हर तरह से योग्य और समझदार इसलिए बनाया कि उसे वह जो कुछ देगा, उसी में संतुष्ट हो जायेगा और स्वयं धन कमायेगा। और यदि दुष्ट निकला तो वसीयत की परवाह न कर अपने पिता की जायदाद उससे बलपूर्वक ले लेगा।

धनगुप्त का पुत्र जब बालिग हुआ, तब उसने मुंशी से अपनी जायदाद की माँग की।

मुंशी ने एक तावीज़ उसके हाथ में देते हुए कहा, "इस तावीज़ के जरिये तुम्हारे पिता ने यह सारी जमीन-जायदाद कमाई है। अपने पिता की जायदाद में से यही तुम ले लो, बाक़ी सब मेरी है।"

धनगुप्त का लड़का विस्मय में पड़ गया। उसने मुंशी से पूछा, "यह कैसा अन्याय है! मेरे पिता की सारी जायदाद आप कैसे ले सकते है? उसपर तो पूरा अधिकार मेरा है।"

"तुम्हारे पिता ने वसीयत में यही लिखाया है, उनकी जायदाद में से मैं जितना चाहूँ, ले सकता हूँ। जितना चाहूँ, उतना तुमको दे सकता हूँ। चाहे तो तुम देख सकते हो!" मुंशी ने कहा।

धनगुप्त का पुत्र अपने पिता की वसीयत लेकर काजी के पास गया। उसने शिकायत की, "इस वसीयत की आड़ में मुंशी मेरे पिता की सारी

जब तुम्हें अपने जीवन में कठिनाई का सामना करना पड़े तो यही मानो कि यह भगवान की कृपा है और वह सचमुच वही बन जायेगी।

-श्रीमाँ

जायदाद हड़पना चाहता है। आप इसका इन्साफ़ कीजिये, मेरे प्रति अन्याय न हो।"

काजी ने सारी वसीयत ध्यान से पढ़ी और मुंशी को बुलवाकर पूछा, "क्यों जी! यह लड़का बालिग हो गया है। अपने पिता की जायदाद चाहता है। यहाँ तक शिकायत लाने की क्या ज़रूरत थी? अपने आप ही उसकी जायदाद दे देते!"

"जी हुज़ूर! मैंने कभी यह नहीं कहा कि मैं न दूँगा। मेरे मालिक ने सारी ज़मीन-जायदाद इस तावीज़ के ज़रिये ही कमायी है। इसलिए मैं उस तावीज को लेने के लिए कहता हूँ, बाक़ी सब मैं रख लूँगा। वसीयत में साफ़ लिखा है कि मैं जितना चाहूँ उतना रख सकता हूँ।" मुंशी ने कहा।

"तब तो उस तावीज़ को छोड़कर बाक़ी सारी जायदाद तुमको पसंद है?" काजी ने पूछा।

"जी हाँ! यही तो मैं आपसे विनती करता हूँ!" मुंशी ने कहा।

"अच्छा, ऐसी बात है तो तुम वह तावीज़ रख लो और अपने मालिक की सारी जायदाद इस लड़के को दे दो। इस वसीयत में यही लिखा है कि तुमको जो पसंद है वही लड़के को दे दो। यह कहीं नहीं लिखा है कि तुमको जो पसंद है, वही तुम रख लो।" काजी ने कहा।

मुंशी का चेहरा सफ़ेद हो गया। उसने धनगुप्त की वसीयत फिर से पढ़ी। उसे लगा कि काज़ी का कहना बिल्कुल सत्य है। वसीयत को समझने में उसकी ग़लती हो गयी। उसने उसी समय धनगुप्त की सारी जायदाद उसके लड़के को सौंप दी।

अरण्य का साथी

गोपाल की माँ एक गरीब विधवा थी। उसके पति द्वारा छोड़ी गई सम्पत्ति में खेत का एक छोटा सा टुकड़ा मात्र था जिसमें वह कुछ सब्जियाँ पैदा कर लेती। उसके पास एक चरखा था। गाँव का एक व्यापारी उसे रूई दे देता और वह उसके लिए सूत कात देती। मजदूरी में उसे कुछ चावल मिल जाता।

वह इन्हीं सीमित साधनों से अपना और अपने छोटे गोपाल का निर्वाह करती थी। उसे अपने जीवन में सिर्फ दो लगाव थे-एक अपने इष्ट देवता कृष्ण से जिन्हें वह गोपाल कहती और दूसरा अपने बेटे गोपाल से। वह अपने इष्ट से वैसा ही व्यवहार करती जैसा बेटे से। वह दोनों को खाने के लिए और रात होने पर सोने के लिए मनाती।

गोपाल थोड़ा बड़ा होने पर पाठशाला जाने लगा। माँ को अब उस दिन का इंतजार था जब वह उसे रामायण और महाभारत पढ़कर सुनाने लायक हो जायेगा।

लेकिन गोपाल के सामने एक समस्या आ गई। घर और पाठशाला के बीच कहीं-कहीं तो बिल्कुल निर्जन, घने वृक्षों के साथ एक उजाड़ स्थान था। वहाँ से गुजरते हुए उसे डर लगता था। वह पाठशाला जाने से कतराने लगा।

"बेटे, तुम्हारा बड़ा भाई उसी जंगल में रहता है। उसका नाम भी गोपाल है। जब भी तुम्हें डर लगे, उसे आवाज देकर पुकारो। वह अवश्य तुम्हारी पुकार सुनेगा और तुम्हारा साथ देगा।" एक दिन माँ ने समझाया।

"तुमने पहले कभी नहीं बताया? वह जंगल में अकेला क्या करता है?" गोपाल ने बालसुलभ उत्सुकता से पूछा।

"वह अपने मवेशियों की देख भाल करता है और बाँसुरी बजाता है।" माँ ने बताया।

अगले दिन जंगल से गुजरते हुए गोपाल एकाग्रचित्त होकर बाँसुरी की आवाज को सुनने की कोशिश करने लगा। और सचमुच, एक मन्द-मन्द मधुर स्वर उसके कानों में आने लगा और धीरे-धीरे अधिक स्पष्ट होता चला गया। उससे अधिक सुरीली आवाज उसने पहले कभी नहीं सुनी थी।

"गोपाल भैया! मैं तुम्हारा छोटा भाई हूँ। मेरा नाम भी गोपाल है। तुम किधर हो? जंगल के सन्नाटे

से मुझे डर लगता है। तुम मेरा साथ क्यों नहीं देते? गोपाल ने पुकारते हुए कहा।

उसे ही-ही-ही करके एक बालक के हँसने की आवाज सुनाई पड़ी। और तुरन्त उससे थोड़ा बड़ा एक बालक उसके सामने प्रकट हो गया। छोटा गोपाल बड़े गोपाल पर मानों मोहित हो गया और बड़े गोपाल ने उसे अंगल के पार तक साथ दिया।

"मैं प्राय: व्यस्त रहता हूँ। इसलिए जब तुम्हें सचमुच डर लगे, तभी बुलाना।" बड़े गोपाल ने सलाह दी।

"मैं तुम्हें जान गया हूँ, इसलिए अब मुझे शायद ही डर लगे। मैं बराबर तुम्हें याद कर लिया करूँगा......"

"यह ठीक रहेगा!"

"लेकिन जंगल पार करते समय यदि मैं न भी डरूँ, तो क्या कभी-कभी एक साथ खेलने के लिए मेरे पास नहीं आओगे?"

"यह अच्छा विचार है। मुझे खेलना सचमुच बहुत पसन्द है।" बड़े गोपाल ने कहा।

इसलिए कभी-कभी गोपाल अपने समनाम को पुकारता और जंगल के धुंधले अन्तराल से वह अकस्मात प्रकट हो जाता। फिर दोनों एक साथ खेलते।

गोपाल अपने नये साथी के बारे में और उसके साथ खेलने के आनन्द के बारे में सब कुछ अपनी माँ को बताता और माँ अपने बेटे से अपना चेहरा छिपा कृतज्ञता के आँसू बहाती हुई अपने इष्ट को बुदबुदाकर धन्यवाद देती।

गोपाल के गुरु जी अपने पिता का अंतिम संस्कार कर रहे थे। रीति के अनुसार शिष्यों को ऐसे अवसर पर यथाशक्ति कुछ न कुछ दान करना पड़ता था।

गोपाल जानता था कि उसकी माँ के पास गुरु जी को देने के लिए कुछ नहीं है। इसलिए उसने माँ से इसकी चर्चा नहीं की। फिर भी, यह सोच कर वह उदास हो गया कि वही एक मात्र शिष्य है जो गुरु जी के पास खाली हाथ जायेगा।

"तुम उदास क्यों हो?" जंगल में जब दोनों मिले तो बड़े गोपाल ने पूछा। छोटे गोपाल ने अपनी समस्या बतायी।

"मेरे पास दूध से भरा एक पात्र है। इसे अपने गुरुजी के लिए ले जाओ।" एक प्रच्छन्न स्थान से पात्र लाकर उसे देते हुए बड़े गोपाल ने कहा।

छोटे गोपाल के आनन्द की सीमा नहीं रही।

पाठशाला में शिष्यों ने गुरुजी को भेंट में भिन्न-

भिन्न वस्तुएँ दीं-नारियल, चावल, कदली, गुड़ इत्यादि। कुछ ने मुद्राएँ भेंट कीं।

अन्त में संकोची बालक छोटे गोपाल की बारी आई। गुरु जी ने उसका पात्र लेकर एक बड़े बर्तन में उसका दूध डाल दिया। लेकिन उसके हाथ का पात्र पुन: दूध से भर गया। उसने फिर उसे खाली कर दिया। लेकिन खाली होते ही उसमें लबालब फिर दूध आ गया।

इस चमत्कार को देख कर गुरुजी को चक्कर आने लगा। बहुत कठिनाई से उन्होंने अपनी संकल्प शक्ति लगा कर संतुलन संभाला और कोई देख ले इसके पहले ही पात्र के साथ एक अन्य कमरे में जाकर गोपाल को बुलाया और पूछा कि वह दुग्ध-पात्र उसे कहाँ मिला। गोपाल ने उन्हें बड़े गोपाल के साथ कभी-कभी होने वाले अपूर्व अनुभव के बारे में बताया। ज्ञानी गुरु को यह समझने में देर नहीं लगी कि बड़ा गोपाल कौन हो सकता है।

"मेरे बच्चे, क्या तुम जंगल में अपने भाई के पास नहीं ले चलोगे?" अनुरोध करते हुए गुरु जी ने कहा।

"क्यों नहीं गुरु जी?"

गोपाल गुरु जी को जंगल में ले गया और बड़े गोपाल को गुरुजी के सामने आने के लिए बहुत पुकारा। लेकिन व्यर्थ। बहुत देर हो गई। फिर भी गोपाल भैया नहीं आये।

छोटे गोपाल ने सोचा कि उसका भाई आज अपनी गायों को लेकर जंगल में कहीं दूर निकल गया होगा। इसलिए गुरु जी को लेकर वह 'गोपाल भैया', 'गोपाल भैया' पुकारता हुआ जंगल के बहुत अन्दर जला गया। लेकिन न कहीं गायों की घंटियाँ

सुनाई पड़ीं और न गोपाल भैया की मुरली की आवाज।

सूर्यास्त हो रहा था और सन्ध्या की कालिमा धीरे-धीरे उतरने लगी थी। झींगुरों की आवाज तेज होने लगी थी। चमगादड़ों के चीखने से जंगल में भय का वातावरण बन गया था। लेकिन इन सब से अनजान गोपाल जंगल में आगे बढ़ता गया और गोपाल भैया को पुकारता रहा। गुरु जी मंत्रमुग्ध-से अपने शिष्य का इस प्रकार अनुगमन कर रहे थे जैसे उन्हें अपने गुरु से आज जीवन की सिद्धि का महामंत्र मिलने वाला है। उनकी आँखों से अविरल आँसू बह रहे थे।

निराश छोटे गोपालने अपमानित और लज्जित अनुभव किया और अपने भैया को धमकी देते हुए कहा, -"यदि तुम हमलोगों के सामने प्रकट नहीं

शूरवीरता की शोभा वाक् संयम, विद्या की शोभा विनय, धन की शोभा सत् पात्र को दान, समर्थ की शोभा क्षमा और सब की शोभा सुशीलता है। - भर्तृहरि

होगे तो मैं तुम्हारे साथ फिर कभी नहीं खेलूँगा"

"और तभी उसने अपने बड़े भैया की आवाज सुनी।

"लेकिन जितना तुम मेरे साथ खेलते हो, मैं भी तो उतना ही तम्हारे साथ खेलता हूँ। मेरी ग़लती क्या है जिसके लिए तुम मुझे खेल के आनन्द से वंचित कर दोगे? अपने गुरुजी को बता दो कि मैं उनकी जिज्ञासा की सराहना करता हूँ, लेकिन उनके लिए मुझे देखने या सुनने का समय अभी नहीं आया है। उन्हें प्रतीक्षा करनी होगी। मैं आश्वासन देता हूँ कि एक दिन उन्हें अपना लक्ष्य मिलेगा- जब वे सचमुच इसके लिए तैयार हो जायेंगे।

"गुरुजी, क्या आपने गोपाल भैया की आवाज सुनी?" गोपाल ने पूछा।

"नहीं तो!"

"नहीं? लेकिन मैंने तो उन्हें स्पष्ट सुना!" गोपाल ने कहा और जो सुना था अक्षरश: उसने गुरुजी को बता दिया।

बच्चों की तरह सुबकते हुए गुरुजी ने कहा, - "यही मेरे लिए पर्याप्त है मेरे बच्चे, कि मुझे एक बरदान का बचन दिया गया है। तुम्हारी माँ की निष्ठा महान है और अपूर्व है तुम्हारा प्रेम और तुम्हारी निष्कपटता! धन्य हो तुम दोनों।"

तब तक रात हो चुकी थी। गुरु जी गोपाल को उसके घर तक छोड़ने गये। उसकी माँ जानती थी कि उसके छोटे गोपाल को अपने गोपाल भैया के साथ खोलने में कभी-कभी देर हो जाती है। इसलिए वह निश्चिंत थी। गुरु जीने गोपाल की माँ के चरण स्पर्श करते हुए कहा,-"आज तुम्हारे गोपाल ने मुझे भक्ति का बह महामंत्र दिया है कि मेरी आत्मा का अंधकार मिट गया है। धन्य हो तुम और तुम्हारा गोपाल।"

Statement about Ownership of CHANDAMAMA (Hindi)

Rule 8 (form VI), Newspaper(Central) Rules, 1956

1. Place of Publication	CHANDAMAMA BUILDINGS NSK Salai Chennai-26
2. Periodicity of Publication	MONTHLY 1st of each Calender month
3. Printer's Name Nationality Address	B.VISWANATHA REDDI INDIAN Chandamama Buildings Chennai-26.
4. Publisher's Name Nationality Address	B.VISWANATHA REDDI INDIAN Chandamama Buildings Chennai-26
5. Editor's Name Nationality Address	B.VISWANATHA REDDI INDIAN Chandamama Buildings Chennai-26
6. Name and Address of individuals who own the paper	Chandamama India Ltd., Board of Directors: 1. Vinod Sethi 2. B. Viswanatha Reddi 3. P. Sudhir Rao

*I, **B. Viswanatha Reddi,** hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.*

1st March 2000

B. VISWANATHA REDDI

Signature of the Publisher

मुम्बई

सात उपद्वीपों के ऊपर सवार
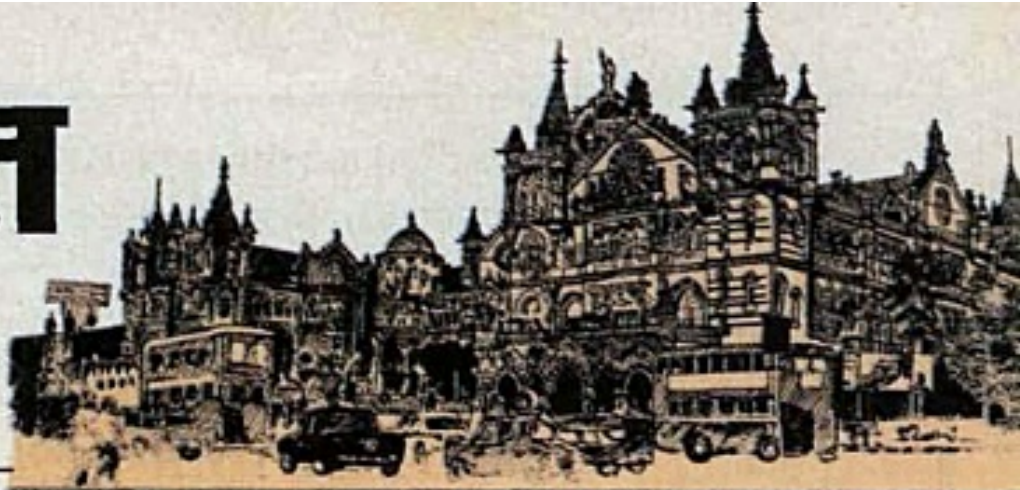
हम उन सात उपद्वीपों को नहीं देख सकते जो कभी एक दूसरे से अलग-थलग थे, किन्तु उन सब को एक साथ मिला कर बम्बई कहा जाता था-जो नगर की अधिष्ठात्री देवी मुम्बा देवी या मुम्बा बाई के नाम पर पड़ा। उनका मूल नाम अम्बा भवानी था। अब बम्बई को मुम्बई कहा जाता है, जो इसकी प्राक् औपनिवेशिक पहचान के बहुत निकट है।

इसका औपनिवेशिक अतीत 16 वीं शताब्दी तक पीछे जाता है। पुर्तगाली सेनाध्यक्ष अल्बूकर्क ने सन् 1510 में गोवा पर अधिकार कर लिया था और सन् 1534 में एक बहुत बड़े क्षेत्र का जमीन्दार बन गया था, जिसमें 'प्रिना उरबिस' यानी 'सुन्दर शहर', जैसा कि वे इसे पुकारते थे, भी शामिल था।

उस क्षेत्र में नाम के आधुनिक अर्थ में कोई शहर नहीं था। किन्तु बाजार अथवा कस्बे अवश्य थे, क्यों कि ईसा से शताब्दियों पहले वह क्षेत्र सीरिया, फारस तथा रोम के व्यापारियों का आकर्षण-केन्द्र था।

जो भी हो, पुर्तगाली इस जमीन्दारी को बहुत मूल्यवान नहीं मानते थे। उन्होंने इसे ब्रिटिश राजकुमार चार्ल्स द्वितीय को दहेज में दे दिया, जब उनकी राजकुमारी कैथरिन द ब्रागांजा ने उससे विवाह किया।

और राजा चार्ल्स ने उस उपहार का क्या किया? उससे प्रतिवर्ष दस पौंड से अधिक आमदनी नहीं होती थी, क्योंकि उसने इसी दर पर ईस्ट इंडिया कम्पनी को इसे पट्टे पर दे दिया।

धीरे-धीरे सातों उपद्वीप मुख्य भूभाग में मिल कर एक भूखण्ड बन गये।

इसकी संवृद्धि और समृद्धि बहुत तेज गति से हुई। कभी अपने स्वामियों को दस पौंड वार्षिक आय देने वाला आज महाराष्ट्र की राजधानी मुम्बई

भारत की वित्तीय राजधानी है। सभी मुख्य बैंकों के प्रधान कार्यालय मुम्बई में हैं। यहाँ देश का सबसे बड़ा शेयर बाजार है। पूरे देश की आय-कर द्वारा प्राप्त आमदनी का 33 प्रतिशत मुम्बई से आता है।

मुम्बई से ही भारत की पहली रेलगाड़ी सन् 1853 में अपने प्रथम गन्तव्य थाना के लिए रवाना हुई थी। यूरोप से आनेवाले जहाजों के लिए यह पहला बन्दरगाह था और आज यह देश का सबसे बड़ा बन्दरगाह है। भारतीय स्वाधीनता संग्राम में भी इसका योगदान इस अर्थ में अनोखा रहा है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का प्रथम अधिवेशन सन् 1885 में यहीं हुआ था।

मुम्बई के विकास में न केवल महाराष्ट्र, गुजरात और दक्षिण भारत का, बल्कि पारसियों का भी बहुत योगदान रहा है जो इस्लाम के बढ़ते प्रभाव में अपने प्राचीन पारसी धर्म को छोड़ने के लिए तैयार नहीं होने के कारण ईरान से यहाँ आ गये थे।

मुम्बई के इतिहास का प्रत्येक काल स्मारकों के रूप में यहाँ अपना पद-चिह्न छोड़ गया है, जिनमें अफगान गिरजा घर, गेट वे ऑफ इंडिया, छत्रपति शिवा जी रेलवे टरमिनस (पहले विक्टोरिया टरमिनस) तथा महालक्ष्मी मन्दिर विशिष्ट महत्वपूर्ण हैं।

मुम्बई फिल्म उद्योग का सम्भवत: दुनिया का सबसे बड़ा केन्द्र है। इसीलिए उसे अमरीका की फिल्म सिटी हॉली वुड के तर्ज पर बॉलीवुड भी कहा जाता है।

गणेश चतुर्थी के अवसर पर शहर का वातावरण आनन्दमय हो जाता है।

आज बृहत् मुम्बई की जन-संख्या 99 लाख से ऊपर है। नगर का भीतरी भाग जबकि प्रशासनिक, व्यापारिक, सांस्कृतिक और शैक्षणिक संस्थानों से भरा पड़ा है, इसका उपनगरीय क्षेत्र भी छोटे-बड़े उद्योगों से घिर गया है।

गले में हार के समान मेरिन ड्राइव और ग्रीन मालाबार हिल्स के साथ, अरब सागर पर स्थित मुम्बई, अति संकुलता के बावजूद, आज दुनिया का एक खूबसूरत और मनमोहक शहर है।

विश्व के किसी भी आधुनिक महानगर से इसकी तुलना की जा सकती है।

खोज करो! अभिव्यक्

इस अंक में प्रकाशित प्रश्नावली के उत्तर अगले अंक में दिये जायेंगे।
तब तक **'भारत की खोज प्रश्नोत्तरी, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडापलानि, चेन्नई-६०० ०२६'.** के पते पर अपने उत्तर भेजने के लिए आप का स्वागत है।
किन्तु, इस प्रश्नोत्तरी-स्पर्धा में भाग लेने के लिए निम्नलिखित सर्जनात्मक कृति अनिवार्य है:
चन्दामामा के फरवरी 2000 अंक में प्रकाशित सभी उद्धरणों और पूरक वाक्यों को पढ़िए, जो कई पृष्ठों पर उद्धृत हैं और यह बताइए कि उनमें से सबसे अधिक आप को कौन-सा अच्छा लगा और क्यों। उद्धरण की पृष्ठ संख्या देते हुए लगभग सौ शब्दों में कारण बतायें। इसे अपने अध्यापक अथवा अभिभावक द्वारा प्रमाणित करा कर अपना नाम तथा हस्ताक्षर, उम्र, कक्षा और विद्यालय (यदि छात्र हैं) तथा अपना पूरा पता लिख कर उपरोक्त पते पर भेज दें।

प्रथम पुरस्कार : 1000 रु.
द्वितीय पुरस्कार : 500 रु.

तथा
पाँच बधाई पुरस्कार
प्रत्येक 200 रुपये

चन्द

भारत

प्रश्न

1

भारत की खोज प्रश्नोत्तरी :
एक युवक किसी बात पर परामर्श लेने के लिए एक ऋषि के पास गया। ऋषि ने तुरन्त उत्तर नहीं दिया, इसलिए युवक प्रतीक्षा करता रहा।
ऋषि की पत्नी कुएं से जल निकाल रही थी। उसने पत्नी को पुकारा और वह पात्र को रस्सी से लटकता हुआ छोड़ तुरन्त दौड़ती हुई आई। युवक को यह देख कर आश्चर्य हुआ कि पात्र कुएं में नहीं गिरा और किसी सहारे के बिना लटका रहा। उसने समझा कि पत्नी पतिव्रता तो होगी ही, उसमें चमत्कार करने की शक्ति भी होगी।
ये ऋषि कौन थे? उनकी पत्नी का नाम क्या था?

2

निम्नलिखित पौराणि
चरित्रों और स्थानों
पारस्परि क सम्बन्ध व
है?

चन्दामामा : भाषाएँ अनेक

करो और पुरस्कार लो!
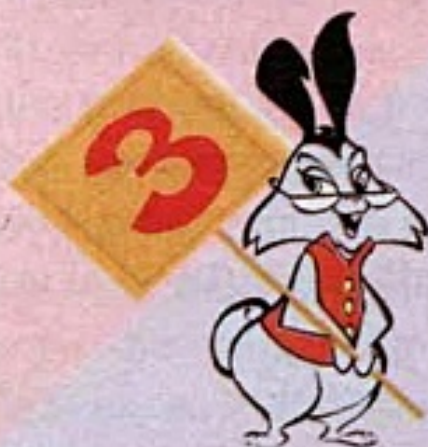
१. वह प्राचीन कृति कौन-सी है, जिसमें राजा विक्रम और बेताल की 25 कथाएं हैं?
२. कालिदास के समय में उज्जैन का नाम क्या था?
३. कालिदास के पूर्व सबसे प्रसिद्ध नाटककार कौन था?
४. प्राचीन भारत का कौन विख्यात कवि राजा था किन्तु योगी हो गया? उसकी कृतियाँ क्या हैं?
५. वाल्मीकि कृत रामायण के किस सर्ग के विषय में यह विश्वास किया जाता है कि वह बाद में जोड़ा गया?

शर्तें

१. चन्दामामा इंडिया लि. के कर्मचारी तथा उनके परिवार/सहयोगी इस स्पर्द्धा में भाग नहीं ले सकते।
२. निर्णायकों का निर्णय अन्तिम होगा और इस सम्बन्ध में कोई पत्राचार नहीं किया जायेगा।
३. अपठनीय प्रविष्टियों पर विचार नहीं किया जायेगा।
४. परिणामों की घोषणा चंदामामा के जून 2000 अंक में की जायेगी।
५. उत्तर हमें 31 मार्च तक मिल जाने चाहिए।

अ.	धृतराष्ट्र	:	गान्धार
ब.	सावित्री	:	साल्व
स.	सहदेव	:	मद्र देश
द.	कर्ण	:	अंग देश
इ.	बभ्रुवाहन	:	मणिपुर

ज्ञान और आनन्द की भावना एक

फिर एक बार संसार की नजरें तिब्बत पर

हाल तक, संसार की बहुत सारी चीजों का फैसला बर्बर भौतिक ताकतें करती थीं। दूसरे विश्व युद्ध (1939-1945) से हालात बदलने लगे। राजनीतिक समस्याओं का समाधान मेल-मिलाप और बातचीत के जरिये होने लगा।

किन्तु बर्बर ताकत की भूमिका अब भी बरकरार है। जैसा कि आप सब को मालूम है, आजादी से पूर्व भारत में कितनी देशी रियासतें थीं। इन रियासतों के राजाओं को यह विकल्प दिया गया कि वे भारत या पाकिस्तान किसी के साथ अपनी रियासत का विलय कर सकते हैं। सैकड़ों रियासतों की तरह कश्मीर के राजा महाराज हरि सिंह ने भारत के साथ विलय करने का निर्णय लिया। किन्तु पाकिस्तान ने बिना किसी वैधानिक अधिकार के रियासत का एक बहुत बड़ा भाग अपने अधिकार में कर रखा है। इसे पाक अधिकृत कश्मीर कहा जाता है।

इसी प्रकार चीन ने बीसवीं शताब्दी के पाँचवें दशाक में तिब्बत पर कब्जा करना शुरू किया। यद्यपि भौगोलिक दृष्टि से यह चीन के निकट है, फिर भी तिब्बत की अपनी संस्कृति और सरकार थी। दलाई लामा बौद्ध धर्म के साथ-साथ तिब्बत सरकार के प्रधान होते थे। चौदहवें दलाई लामा तेनाजिन ग्यात्सो ने भारत में शरण ली। वे धर्मशाला स्थित अपने मुख्यालय से निर्वासित सरकार का संचालन करते हैं।

दलाई लामा के दूसरे स्थान पर पंचन लामा तिब्बतवासियों का नेता था। चीन ने पंचन लामा के कार्यालय को अपनी मुट्ठी में कर रखा है। चीन ने तिब्बत के तीसरे महत्वपूर्ण नेता करमपा के साथ भी वैसा ही करने का प्रयास किया। वर्तमान सतरहवाँ करमपा, जिसका नाम उग्येन ट्रिनले है, भाग कर भारत आ गया और जनवरी के आरम्भ में धर्मशाला पहुँच गया।

करमपा किशोरवय है। स्पष्ट है कि उसे तिब्बत पर चीन का प्रभुत्व असहनीय लगा। कुछ साथियों के साथ बर्फ़ानी तूफ़ानों और आँधियों का सामना करता हुआ और बर्फीली तंग घाटियों व गहरे खड्डों को पार करता हुआ सैकड़ों किलो मीटर का मार्ग उसने पैदल तय किया।

दलाई लामा ने 'द हेरिटेज' (चन्दा मामा का सह-प्रकाशन 1985-1989) को एक भेंट में बताया कि चीन ने तिब्बत में कितनी तबाही मचा दी। तथाकथित सांस्कृतिक क्रांति के बहाने अधिकांश धार्मिक और सांस्कृतिक ग्रंथ नष्ट कर दिये। और

उन्होंने उनकी पांडुलिपियों को अपने जूतों के तल्लों और लपेटन कागजों की तरह इस्तेमाल किया अथवा खाद के गड्ढों में डाल दिया।

हेरिटेज द्वारा यह प्रश्न करने पर कि क्या उनके रवैये में कोई परिवर्तन आया है, दलाई लामा ने कहा, "हाँ, उनका दृष्टिकोण बदला है।"

विश्व को आशा है कि यह और भी बदलेगा और कम से कम तिब्बत को स्वायत्तता प्रदान की जायेगी। दलाई लामा और करमपा अपनी राजधानी

लासा लौट पायेंगे।

तिब्बत को इसकी ऊँचाई के कारण 'दुनिया की छत' कहा जाता है। इसका सबसे निचला क्षेत्र भी समुद्र तल से चार हजार मीटर ऊँचा है। कृषि और भेड़पालन इनके मुख्य व्यवसाय हैं। ये ऊन, कस्तूरी, सोना, गेहूँ और जौ का भी व्यापार करते हैं। ये सबसे अधिक याक पर निर्भर करते हैं क्योंकि यह पशु अत्यन्त ठंढ भी बर्दाश्त कर सकता है। लगभग सभी तिब्बतवासी बौद्ध हैं। वे परिश्रमी और सरल स्वभाव के होते हैं।

विश्वास किया जाता है कि तिब्बत बौद्ध धर्म की आध्यात्मिक साधना का बहुत बड़ा केन्द्र है और बौद्ध मत के सिद्ध योगी यहाँ बहुत रहते हैं।
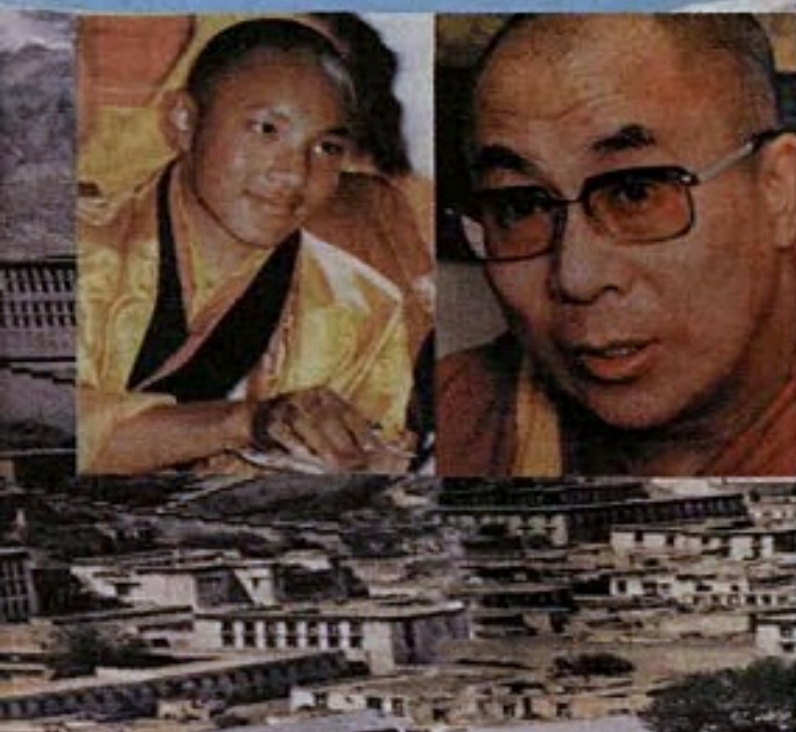
चित्र
कैप्शन प्रतियोगिता

क्या तुम कुछ शब्दों में ऐसा चित्र परिचय बना सकते हो, जो एक दूसरे से संबंधित चित्रों के अनुकूल हो? तुम एक सामान्य पोस्टकार्ड पर इसे लिख कर इस पते पर भेज सकते हो:

चित्र परिचय
प्रतियोगिता
चन्दामामा
वडपलनि
चेन्नै -६०० ०२६

जो हमारे पास इस माह की २५ तारीख तक पहुंच जाए। सर्वश्रेष्ठ चित्र परिचय पर १००/- रुपये का पुरस्कार दिया जाएगा, जिसका प्रकाशन अगले अंक के बाद के अंक में किया जाएगा।

जनवरी अंक के पुरस्कार विजेता हैं :

कुमारी सोनिया शर्मा
द्वारा राजकुमार शर्मा
बी-1/362,जनकपुरी, नयी दिल्ली-11008

विजयी प्रविष्टि :
"कदम ताल - नृत्य ताल"

"I want the very best for my home. Nothing but a Sumeet will do"

payal rajaratnam
corporate executive

Sumeet. loved by millions. worldwide.

"Even my brother in Australia depends on a Sumeet"

aila sharma
fashion designer

"Whatever the task, I know my Sumeet won't let me down"

ritika banker
interior designer

"Sumeet is the best. I recommend it"

tripta khanna
housewife

"The Sumeet is very popular even in Sri Lanka"

sujaya menon
business consultant

Whether it's for grinding chick peas in the West Indies or coffee beans in New Zealand, ice kachang in Malaysia or peanut butter in the U.S. millions of customers trust only a Sumeet. If you want the best the world has to offer, bring home a Sumeet today!

DOMESTIC
India's first mixer grinder

ASIA KITCHEN MACHINE
The world's toughest mixer-grinder

DOMESTIC PLUS
The family mixer-grinder

Sumeet®
STRONG & RELIABLE

Sumeet Marketing Centre, 571, Anna Salai, Chennai 600 018. Tel : 044-4343316 / 4348123 / 4349755. Fax : 044-4341479 / 4917213

FIFTH ESTATE : 3828

CHANDAMAMA (Hindi) MARCH 2000 Registrar of Newspapers, India RN1087/57